



# सोलह भावना

तथा

## दश धर्म

अत्र दर्शनविशुद्धि नाम प्रथम अंगकी भावना वर्णन करिये हैं । हे मव्यजीव हो जो ! या मनुष्यजन्म पाय याकू सुफल किया चाहो हो तो सम्पद्दर्शनकी विशुद्धता करहु । या सम्पद्दर्शन समस्त धर्मका मूल है सम्पत्कन्त्र विना आश्रय धर्म हू नाहो हाय नधर्म हू मुनिहा हाय सम्पद्दर्शनविना ज्ञान है सा कुत्रान चारित्र कुचारित्र है तप है सो कुतप है । सम्पद्दर्शन विना यो जीव अनन्तकाल परिभ्रमण किया है अत्र जो चतुर्गति समारपरिभ्रमणसू भयमान हा अर जन्मजरामरणतैं छुट्या चाहो हो अर अनन्त अग्निनाशी सुखमय आत्माकू खन्डो हो तो अन्य समस्त परद्रव्यनिर्मे अभिलाषा छांड़ि सम्पद्दर्शनही की उजलता करहु । केसीक है दर्शनविशुद्धता निर्वाणके सुखकी कारण है दुर्गतिका निराकरण करनेवाली है । विनय सपन्नादिक पद्रहकारणनिका मूल

कारण है दर्शन विशुद्धता नाही होय ता अन्य पन्द्रह भागना नाही होय है यातें सत्ताका दु स्वरूप अन्धकारके नाश करनेकू सूर्यसमान है भव्यनिकू परम शरण है ऐसी दर्शनविशुद्धता नाम भावना भावहू । जैसे स्वपरद्रव्यका भेद निज्ञान उज्जल होय तैसें यत्न करहु । यो जोन अनादिकालका मिथ्यात्वनाम कर्मके बधि होय आपका स्वरूपकी अर परकी पहिचान ही नाही करी जैम पर्यायकर्मके उदयत पर्याय पावै तैसी पर्यायकू ही अपना स्वरूप जानता अपना सत्यार्थरूपका ज्ञानमें अन्य होय आपके स्वरूपत भ्रष्ट हुआ चतुर्गतिमें भ्रमण करै है देवकू जाने नाहीं धर्म जानै नाही सुगुरु कुगुरुकू जानै नाहीं । बहुरि पुण्यका, पापका, इसलोकका, परलोकका त्यागनेयोग्य, ग्रहणकरने योग्य, भक्ष्यअभक्ष्यका, सत्सगका कुसगका, शास्त्रका कुशास्त्र का विचार रहित कर्मका उदयके रनमें एकरूप भया अपना हित अहितकू नाही पहिचानता परद्रव्यनिमें लालसास्प होय सदाकाल बलेशित होय रखा है कोऊ अकस्मात काललब्धिमें प्रभाविते उच्चमकुलादिकमें जिनन्द्रधर्म पाया है यातें वीतराग-सर्वज्ञका अनेकातरूप परमात्मके प्रसादतें प्रमाणनयनिक्षेपनितें निर्णयकरि परीक्षाका प्रधानी होय वीतरागी सम्पज्ञानी गुरुनि के प्रसादतें ऐसा निश्चय भया जो एक जाननेवाला ज्ञायकरूप

अविनाशी अखण्ड चेतना लक्षण देहादिक सप्रस्तपरद्रव्यनिर्ते  
 भिन्न मैं आत्मा हूँ देह जाति कुल रूप नाम इत्यादिक मोर्ते  
 अत्यन्त भिन्न हैं अर राग, द्वेष, काम, क्रोध, मद, लोभादिक  
 कर्मके उठयेंतें उपजें मेरे शायकस्वभावमें विकार जैसे स्फटिक  
 मणि तो आप स्वच्छ श्वेतस्वभाव है तिसमें डाग-मसर्गते काला  
 पीला, इरालाल, अनेक रगरूपके दीखे हैं तमें मैं आत्माका  
 स्वच्छ शायकभाव हूँ निर्विकार टकोत्कीर्ण हूँ मोहकमजनित  
 राग द्वेषादिक यामें झलकै हैं ते मेरे रूप नाहीं पर हैं ऐसैं तो  
 अपने स्वरूपका निश्चय हुआ । बहुरि सर्वज्ञ वीतराग परम  
 हितोपदेशक अर बुधा, वृष्णा, जन्म, मरण, रोग, शोक, भय,  
 विषमय, रागद्वेष, निद्रा, मद, मोह, चिन्ता, स्वेद, अरति  
 इन अष्टादशदोषनिका अत्यन्त अभाव जाके भया और अन-  
 न्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तसुख इत्यादिक  
 अनन्त आत्मीय अविनाशोगुण जाके प्रकट भये सो ही आप  
 हमारे चन्दन स्तवन पूजन करने योग्य हैं । अन्य कामी  
 क्रोधी लोभी मोही स्त्रीनिमें आशक्त शस्त्रादिक ग्रहण क्रिये  
 कर्मके आधोन इन्द्रज्ञानके धारक मर्त्यतारहित हैं सो मेरे  
 चन्दन स्तवन पूजन योग्य नाही । जा चारनिमें शिरोमणि  
 अर चारनिमें शिरोमणि है सो कसैं आराधना योग्य होय ।

बहुवि मर्जवीतरागका उपदेश्या अर प्रत्यक्ष अनुमानादिकरि  
 जामे सर्वथा बाधा नाहीं आये अर समस्त छइकायके जासनि  
 की हिंमारहित धर्मका उपदेशक आन्मासा उद्धारके अनेक  
 कातरूप वस्तुक् साक्षात् प्रगट करनेवाला ही आगम है  
 सो पढने पढराने श्रवण करने श्रद्धान करने बन्दने योग्य  
 है । अर ज रागी द्वेषोन्तिकरि प्ररूपण क्रिये अर विषयानुराग  
 अर कपायके बधानेवाले जिनमे हिंसाक करनेसा उपदेश  
 है ऐसे प्रत्यक्ष अनुमान करि साधित एसातरूप शास्त्र श्रवण  
 पढनेयोग्य नाहीं नन्नायोग्य नाहीं है । बहुवि 'वश्यनि  
 की बाठाका अर कपायका अर आरम्भ परिग्रहका याकेँ  
 अत्यन्त अमात्र भया, कल आत्माकी उज्जलता करनेमें  
 उद्यमी, ध्यान स्वाध्यायमें अत्यन्त लीन, स्वाधीन कर्मबध  
 जनित दुःख सुखमें साम्प्रभावके धारक, जीवन भरण लाभ  
 अलाभ स्तवननिन्दनेमें रागद्व शरहित उपमर्गपरोपहानिके सहने  
 में अकम्प धैर्यक धारक परमनिरग्रन्थ दिगम्बर गुरु ही  
 बन्दन स्तवन करने योग्य है अन्य आरम्भी कपायी  
 विषयानुरागी कुगुरु कदाचित् स्तवन बन्दन करने योग्य  
 नाहीं हैं । बहुवि जीवदया हो धर्म है हिंसा कदाचित्  
 नाहीं जो कदाचित् धैर्यका

हो जाय अर अग्नि शीतल हो जाय अर मर्षका मुखमे  
 अमृत हो जाय अर मेरु चलि जाय अर पुथ्वी उलट  
 पलट हा जाय तो हू हिमामे तो धर्म कदाचित नाहों  
 होय । ऐसा दृढश्रद्धान सम्यग्दृष्टिके होय है जाके अपने  
 आत्माके जनुभनमें अर सर्वत्र वीतरागरूप आपके स्वरूप  
 में अर निरग्रन्थ विषयरूपाय रहित गुरुमें अर अनेकात  
 स्वरूप आगममे अर दयारूप धममें शकाका अमान सा  
 निश्चित अग है सम्यग्दृष्टि यामें कदाचित् शका नाहीं  
 करै है । अहुरि सम्यग्दृष्टि है सो धर्मसेवनकरि निपयनि  
 पाछा नाही करै है । जातें सम्यग्दृष्टिकुं इन्द्र अहमिन्द्र-  
 लोकत्रेनिपै हू महान वेदनारूप विनाशीक पापका बीज  
 देखे हैं अर धर्मका फल अनन्य अविनाशी स्वाधीन  
 सुखकरियुक्त मोक्ष दीखे है तातें जैमें बहुमूल्यरत्न छाँटि  
 काचखण्डरू जोहरी नाहीं ग्रहण करै ह तमें जाक साचा  
 आत्मीक अविनाशी बाधारहित सुख दीख्या सो झुठा  
 बाधामहित निपयनिका सुखमें कैमें बाछा करै तातें सम्यग्दृष्टि  
 बाँछारहित हो होय है । अर जो अव्रती सम्यग्दृष्टिके  
 वर्तमानकालमें आजीविकादिकनिमें तथा स्थानादिकपरिग्रहमे  
 वेदनाके अमानर्म जो बाछा होय है सो वर्तमानकालकी

वेदना सहनेकी आत्मभर्यते वेदनाका इलाजमात्र चाहै है।  
 जैसा रागी कडो औषधित अतिविरक्त होय तो हू वेदना  
 का दुख नाहो सखा जाय ताते कडो औषधि वमम  
 विरेचनादिरका कारण हू ग्रहण करै है दुर्गंध तेजादिक  
 हू लगायै है अन्तरगमें औषधित अनुराग नाहो है तैसें  
 सम्प्रवृष्टि निराछरु है तो हू वर्तमानके दुख भेटनेक  
 योग्य न्यायके विषयनिको वाछा करै है । अर जिनक  
 प्रत्याख्यानानरण कपातका अमान भया ते अपना मौ खड  
 हा ता हू विषयवाछा नाहो करै- है यात सम्प्रवृष्टि  
 अशुभकर्मके उदयते प्राप्त भई अशुभ सामग्री तिनमें 'लानि  
 नाहो करे परिणाम नाहो बिगाडे है मैं पूर जंया धर्म  
 वाध्या तैसा भोजन स्त्री पुत्र दरिद्र सम्पदा आपदाक  
 प्राप्त भया हू तथा अन्य किसीक रोगी दरिद्रीहीन नाच  
 मनोन देखि परिणाम नाहो बिगाडे है आपकी सामग्री  
 जाना कलुषता नाहो करै है तथा मलमूत्र कर्दमादिकद्रव्यक  
 दखि अर भयकर स्मशान वनादिश्रेयक दखि भयरूप  
 दुग्धदायी कालक दखि दुष्टपना कडवापना इत्यादिक  
 वस्तुका स्मरणक देखि अपना परिणाममें क्लेशित नाहो  
 हाना सो निर्विचिकित्सित अग सम्प्रवृष्टिके होय ही

है। बहुत सोंटे शास्त्रनित तथा व्यतरादिकटेनिकृत  
 प्रक्रियातें तथा मणि मन्त्र औषधादिक्रनिके प्रभाततें अनेक  
 वस्तुनिके निपरीत स्वभाव देखि सत्यार्थवर्मत चलायमान  
 नाहीं होना सो सम्यग्दर्शनका अमूढदृष्टि गुण सो सम्यग्दृष्टि  
 के हाथ हो है। बहुत सम्यग्दृष्ट अन्य जीवनिके अज्ञान  
 तें अशक्ततातें लगे हुये दोष देखि अच्छादन करे है  
 जो मसारीजीव ज्ञानायरण दर्शनायरण मोहनीय कर्मके वशि  
 होय अपना भूल रहे हैं कर्मके आधीन असत्य परधन-  
 हरण कुशीलादि पापनिर्ण प्रवृत्ति करै है जे पापनिते  
 दूरि प्रवर्तै है ते धन्य हैं। बहुत कोऊ धर्मात्मापुरुष  
 ( नामीपुरुष ) पापके उदयतें चूकि जाय ताकू देखि ऐसा  
 विचार जो ये दोष प्रगट होसी तो अन्य धर्मात्मा अर  
 जिनधर्मकी बड़ी निन्दा होमी या जानि दोष अच्छादन करै  
 अर अपना गुण होय ताकी प्रशंसाका इच्छुक नाहीं होय  
 है सो ये उपगूहनगुण सम्यक्त्वको है इनगुणनितें पवित्र  
 उज्जल दर्शनविशुद्धता नाम भावना होय है। बहुत जो  
 धर्ममहित पुरुषका परिणाम कदाचित् रोगकी वेदनाकरि  
 धर्मतें चलिजाय तथा दागिद्रूरि चलि जाय तथा उपमर्ग  
 परीपहनिकरि चलिजाय तथा अमहायता करि तथा अहार-



पानका निरोधकरि परिणाम धर्मतैं शिथिल होजाय तारु  
उपदेशकरि धर्मपै स्तम्भन करै । मो ज्ञानी मो धर्म  
क धारक तुम मचेत होहूँ पैस कायरता धारण करि  
धर्मम शिथिल भय हो रोगसी वेदनासे धर्मतैं चिगे हो  
ज्ञानी होय कैय भूने हो यो अमातावेदनीकर्म अपना  
अयमर पाय उदयम आय गया है अब जो कायर होय  
दीनताकरि रुदननिलापाटि करते भोगोगे तो कर्म नाही  
छाडेगा कर्मके दया नाही होय है और धीरपनातैं  
भोगोगे तो कर्म नाही छाडेगा कोऊ देव दय दानव  
मन्त्र तन्त्र ओषधादिक तथा स्त्री पुत्र मित्र बाधय सैन्य  
सुमटादि उदयम आयुकर्म हरनेकू समर्थ है नाही यो  
तुम अच्छो तरह समझो हो अब इस वेदनामें कायर  
होय अपना धर्म और यश और परलोक इनकू कैम  
बिगाड़ी हो अर इनकू बिगाडि स्वछन्द चेष्टा बिलापादि  
करनेतैं वेदना नाही घटै है ज्यो ज्यो कायर हावामे  
ल्यो ल्यो वेदना दुग्न बढेगा । तार्त आ साहस धारण  
करि परम धर्मका शरण ग्रहण करो । समारतैं नरकके  
तथा तिर्यचनिके क्षुधा तृषा रोग सताय ताडन मारण  
शीत उष्णादिक घोर दुख असह्यत कालपर्यन्त अनेक

धार अनन्तमव धारणकरि भोगे ये तुन्हारे कहा दुःख  
 है अल्पकालमें निर्जरगा अर रोग वेदना देहकू मारेगा  
 तुम्हारा कँतनस्वरूप आत्माकू नाही मारेगा । अर देह  
 का मारना अउश्य हायगा जो देह धारण किया तारुँ  
 अउश्यम्मायी मरण है सो अर सचेत होहु ये कर्पका  
 जीतवाको अवसर है अर भगवान पंचपरमेष्ठोका शरण  
 ग्रहण करि अपना अजर अमर अखण्ड जाता दृष्टा  
 स्वरूपका ग्रहण करो ऐसा अवसर फेरि मिलना दुर्लभ  
 है इत्यादिक धर्मका उपदेश देय धर्ममें दृढ करना अर  
 अनित्यय असरणादि भावना ग्रहण शीघ्र करावना त्याग  
 वृत्तादिक छाडि दिये होय तो फिर ग्रहण करावना तथा  
 शरीरका मकनादिक दुःख दूरि करना अर कौउ टहल  
 करनेवाला नाही होय तो आप टहल करना अन्य साधर्मिका  
 मेल मिलादना आहार पान औषधादि करि स्थितिकरण करना  
 तथा मलमूत्रकफादिक होय तो धोवना पूछना इत्यादिक  
 करि स्थिर करना तथा दारिद्र करि चलायमान होय  
 तिनका भोजनपानादिक करि आजीविकादिक लगाय देनेकरि  
 उपमर्ग परीपहादिक दूर करने करि मत्पार्थधर्ममें स्थापना  
 करना सो स्थितिकरण अङ्ग सम्यदृष्टिके होय है । बहुरि

चात्मवत्पुण्यनामगुण सम्पद्दृष्टिके हाथ है ममारी जीवनिकी प्राप्ति तो अपने स्त्री पुत्रादिकनिर्भर तथा इन्द्रियनिके प्रिय प्रेमनिर्भर धनके उपासनेमें बहुत रहै हैं जाके स्त्री पुत्र धन परिग्रह प्रियादिकनिके ससार परिभ्रमणके कारण जानि अन्तर्द्वेष दोतरागता धारणकरि जाकी धर्मात्मामें रत्नत्रयके धारक मुनि अजिका श्रावक श्राविकामें वा धर्मके आयतननिभ अत्यन्त प्रीति होय ताके सम्पद्दर्शनका चात्मवत् अग होय है । बहुत जो अपने मनकरि वचनकरि फापकरि धनकरि दानकरि व्रतकरि तप भक्तिकरि रत्नत्रयका प्रभाव प्रगट करै सो मार्ग प्रभावना अग है याका विशेष प्रभावना अगकी भावनामें वर्णन करियेगा । ऐम सम्पद्दर्शनके अष्ट अंग धारण करनेतें इनगुणनिका प्रतिपक्षी शकाकाक्षादिक दोषनिका अभावकरि दशन विशुद्धता हाथ है ।

बहुत लोकमूढ़ता देवमूढ़ता गुरुमूढ़ताका परिणामनिकु छाँड़ि श्रद्धानक उज्जल करना । अर लोक मूढ़ताका स्वरूप ऐसा है जो मृतकनिका हाड नखादिक गगामें पडुचानेमें सुगति भई मानै हैं तथा गगाजलक उत्तम मानना तथा गगास्नानमें अन्य नदीके स्नानमें नदीकी लहर लेनेमें धर्म मानना तथा मृतक भताके साथ जोयती

स्त्री तथा दासी अग्रिमें दग्ध हो जाय जाकू सती मानि पूजना मरणाकू पितरमानि पूजना, पितरनिकू पातडीमें स्थापना - करि पहरना तथा सुर्ष चन्दमा मंगलादिक खेहनिकू सुवर्णरुगाका बनाय गलेमें पहरना तथा ग्रहणिका दोष दूरि करनेकू दानदेना सक्रान्ति व्यतिपात सोमोती अमावसी - मानि, दान - करना सूर्यचन्द्रमाका ग्रहणका निमित्ततैं स्नान करना डामकू शुद्ध मानना हस्तीके दतनिकू शुद्ध मानना कूपा पूजना सूर्यचन्द्रमाकू अर्घ्य देना, देहली पूजना, मूशलकू पूजना, छींरुकू पूजना, विनायक नामकरि गणेश - पूजना तथा दीपकको जोतिकू पूजना तथा देवताको बोलारी गोलना अडूला चोटो रखना देवताको भेंदके करारतैं अपना पतानादिकका जीयत मानना सतानकू देवताका दिया मोनना तथा अपने लाभ वास्ते तथा कार्य सिद्धि वास्ते ऐसी बिनती करे जो मेरे एता लाभ हो जाय तथा सतानोंका या रोग मिटि जाय तथा सतान हो जाय वा बैरीका नाश हो जाय तो मैं आपके छत्र चढाऊ मकान रनाऊँ इतना धद भेंट करु ऐसा करार करे है देवताकू साँक ( हिरसमत )। देय कार्यकी सिद्धिके वास्ते घाँडे है। तथा रात जगा करना कुलदेवकू

अत्यन्त अभाव होय है तार्क दून निशुद्धता होय है  
 सम्यदष्टिके माँचा विचार ऐसा है ह आत्मन् या उच्च जाति  
 है सो तुम्हारा स्वभाव नाही यह तो कर्मकी परिणमनि,  
 परकृत विनाशीक, कर्मनिके आधीन है। सगारम अनेरूपार  
 अनेरुजाति पाई, माताकी पक्षक जाति कहिये और जीव  
 अनेरुगार चाडालीके तथा भोलनीके तथा मोक्षणीके,  
 चमारीके, धोत्राडिके, नायणिके, डूमणीके, नटनीके, वेश्यकं  
 दासीके फलालीके, धीररो इत्यादि मनुष्यनिके गर्भम उपज्या  
 तथा छुरी,, कुरी, गर्दभो, स्यात्णो, कागली, इत्यादिकी  
 तिर्यचनिके गर्भमें अनतगार उपजि मरया। अन्तगार  
 नीचजाति पावे तब एरु गार उच्चजाति पावै फिर अनतगार  
 नीच जातिपावै तर एरुगार उच्चजाति पावै ऐसे उच्चजाति  
 भो अनतगार पाई तो ह मसारपरिभ्रमण ही पिया, अर  
 ऐसे ही पिताकी पक्षका डुल ह उचा नीचा अनतगार  
 प्राप्त भया सगारम जातिका डुलका मद वैसैं करिये ?  
 स्वर्गका नहद्विकुदय हरिकरि एकेन्द्री आय उपनै तथा  
 स्वनादिक निन्ध तिर्यचनिमें उपनै तथा उच्चमकुलका धारक  
 दाय सो चाडाली जाय उपजै ताँत जातिरुत्तमें अहकार  
 करना मिथ्यादशन है। हैं आत्मम् ! तुम्हारा जातिकुल

या सिद्धनिके समान तुम आपामूलि नाताका रुचिर पिताको  
वीर्यते उपजै जातिकुलमे मिथ्या - आपा धरि कर हू अनतकाल  
दिगोदयाम मति करो। वीतरागका उपदेश ग्रहण कया  
तो इस देहकी जातिके हू समय शील दया सत्यवचनादिकरि  
सफल करी जो मैं उत्तम जातिकुल पाय नोच कर्मीनिकेसे  
हिंसा असत्य परधन हरण कुशोलसेवन अभक्ष्य भक्षणादि  
अयाज्य आचरण वैसे करू नाहीं करू ऐसा अहंकार करना  
योग्य है सम्यक्दृष्टिके कर्मकृत पुद्गलपर्यायमे कदाचित्त  
आत्मबुद्धि नाहीं होय है। बहुरि ऐश्वर्य पाय ताका मद  
कैसे करिये या ऐश्वर्य तो आपा भुलाय बहु आरम्भ राग  
द्वेषादिकर्म प्रवृत्ति कराय चतुर्गतिमें परिभ्रमणका कारण  
है और निर्गथपना तीनलाफमे घ्यावने यागि है पूज्य है  
अर यो ऐश्वर्य क्षणभंगुर है बड़े बड़े इन्द्र अहमिन्द्रानिका  
पतनसहित है बलभद्र नारायणनिका ऐश्वर्य क्षणमात्रमे  
नष्ट हो गया अन्यजीवनिका ऐश्वर्य केतरु है ऐमें  
जानि ऐश्वर्य दोष दिन पाया है तो दुखित जीवनिरा  
उपकार करो विनयवान होय दान देहु परमात्मस्वरूप अपना  
ऐश्वर्य जानि इस कर्मकृत ऐश्वर्यमें विरक्त होना योग्य है।  
बहुरि रूपका मद मति करो यो विनाशीक पुद्गलको स्वरूप

नार्ही विनाशोक्त है क्षणक्षणमे नष्ट होय है इसरूपक रोग  
 वियोग दखि महादुरूप करेगा ऐमा हाडचामको रूपमें  
 रोगी होय मद करना बडा अनर्थ है इम आत्साकारूप तो  
 केवल ज्ञान है जियमे लोभ अलोके सर्व प्रतिबिम्बित होय  
 हैं ताते चमडाका रूपमें अपा छाडि अपना अविनाशी ज्ञान  
 स्वरूपमें बापाधारहू बहुरि श्रुतिका गर्वहू छाडहू आत्मज्ञान  
 रहितका श्रुति निष्फल है जातैं एकादशअगनका ज्ञान सहित  
 होय करहू अमन्य ससारहीमें परिभ्रमण करै है सम्य'दशन  
 बिना अनेक व्याकरण छन्द अलङ्कार काव्य कोपादिक  
 पढ़ना निपरोत धर्मम अभिमान लोभम प्रवर्तन कराय संवार  
 रूप अन्यक्रमे डबोचनेचे अर्थि जानहू और इस दखिजनित  
 ज्ञानका कहा गर्व है एरुक्षणमे बातचीत रुकादिकके घटने  
 मधनेतैं ज्ञान चलायमान होय जाय है अर इन्द्रियजनित  
 ज्ञान तो इन्द्रायनिका विनाशोक्त साथ ही विनशेगा अर  
 मिथ्याज्ञान तो ज्यों वर्षगा त्यो खाटे काव्य खोटी टोका-  
 दिकनिकी रचनामें प्रवर्तन कराय अनेक जनिहू दुराचारमें  
 प्रवर्तन कराय हुयेपदेगा तातैं श्रुतका मद छाडहू ज्ञान पाय  
 आत्मविपुद्धता करहू ज्ञान पाय आझानो कैसे आचरणकरि  
 ससारमें भ्रमण करना योग्य नार्हीं । बहुरि समकबन्ध बिना

मिथ्यादृष्टिका तप निष्कल है- तपको मद करो हो जो  
में बड़ा तपस्वी दृ सो मदके प्रभावमें बुद्धि नष्ट करिके  
यो तप दुर्गतिमें परिभ्रमण करावेगा- ताँ तपका गर्व  
करना महा अनर्थ जानि भव्यनिकृ तपका गर्वना योग्य  
नाही है । बहुति जिस बलकरि कर्मरूप नरोक् जीतिये  
तथा काम क्रोध लोभकृ जीतिये सो बल तो प्रशसा-  
योग्य है अरु देहका बल यौवनका ऐश्वर्यका बल पाय  
अन्य निर्मल अनाथ जीनिकृ मारि लेना धन खोसिलेना  
जमी जीविका खोसिलेना कुशील सेवन करना दुराचारमें  
परतन करना सो बल तो नरक के घोर दुःख असह्यत-  
काल भोगाय तिर्यचगतिमें मारणता उनलादन करि तथा  
दुर्वचन तथा क्षुधा तृपादिकनिके दुःख अनेक पर्यायनिमें  
भुगत्ताय एकेन्द्रियनिमें समस्त बलरहित असमर्थ कौगा ।  
ताँ बलका मद छाडि क्षमा ग्रहण करि उत्तमतपमें प्रवर्तन  
करना योग्य है ।

बहुति जे गिज्ञान कहिये अनेक हस्तकला अनक  
वचनकला अनेक मनके विकल्प जिनकरि-यो आत्मा चतुर्ग-  
तिरूप ससारमें परिभ्रमण करि दुःख भोगै है ते समस्त  
कुज्ञान हैं । इस ससारमें- खोटीकला चतुरताका बड़ा गर्व



है जो हमारा सामर्थ्य ऐसा है कहे तो सचिकू झूठकू  
 साचा करिदेवँ कलक रहितकू कलकमहित करिदेवँ  
 अदण्डनिकू दंड देने योग्य करि देवँ बहुत दिननिका  
 सचय किया हुआ द्रव्यकू कड़ा लेवँ तथा धर्म छुटाय  
 अन्यथा श्रद्धान कराव देवँ तथा प्राणीनिके घसीकरण  
 तथा अनेक जीवनिका मारण तथा अनेक जलमें गमन  
 करनेके, स्थलमें गमन करनेके, आकाशमें गमन करनेके,  
 अनेक यन्त्र बनायदेवँ इत्यादिक कलाचातुर्य है ते मय  
 कुशान है याका गर्व नरकके घोर दुःखका कारण है ।  
 कलाचातुर्य सम्यक् तो सो है जाँव अपना आत्माकू  
 विषयरूपायके उलझाईत सुलझावना तथा लोकनिकू हिंसा-  
 रहित सत्यमार्गमें प्रवर्तवना है, ऐसँ सत्यार्थ वस्तुका  
 स्वरूप समझि जाति, कुल धन, ऐश्वर्यरूप, विज्ञानादिककू,  
 कर्मके अधीन जानि इनका मद छाँडि दर्शनविमुद्धता  
 करो । ऐसँ तीन मृदता और आठ शंकादिक दोष  
 अर पट्ठनायतन अर अष्टमद ऐसँ पच्चीस दोषका  
 परिहार करि सम्यग्दर्शनकी उज्जलता होय है ऐमँ जानि  
 दर्शनविमुद्ध भावनाही निरन्तर चिन्तवन्करि अर याहीकू  
 ध्यान गोचरकरि स्तुति सहित उज्जलता होय है ऐसँ

जानि दर्शन विशुद्ध भावनाही निरन्तर चिन्तनकरि अर  
याहीकू ध्यानगोचर करि स्तुति महित उज्ज्वल अर्घ  
उतारण करै सो मुक्तिस्त्रीसू सम्बन्ध करै है । ऐसे  
दर्शन विशुद्धता नाम प्रथम भावना वर्णन करी ॥ १ ॥

अब आगे विनयसम्पन्नता नाम दूसी भावना कहिये  
हैं सो—विनय पंचप्रकार कक्षा है दर्शनविनय, ज्ञान  
विनय, चरित्र विनय, उपचारविषय । तथा जो अपने  
श्रद्धानके शकादिकदोष नहीं लगायना तथा सम्यग्दर्शन  
की विशुद्धताकरि ही अपना जन्म सफल मानना सम्यग्दर्शन  
के धारकनिमें प्रीति धारना आत्मा अर परका भेद  
विज्ञानका अनुमन करना सो दर्शनविनय है । बहुरि  
सम्यग्ज्ञानके आराधनमें उद्यम करना, सम्यग्ज्ञानकी फथनी  
में आदर करना तथा सम्यग्ज्ञानके कारण अनेकांत रूप  
जिनसूत्र तिनके श्रवण पठनमें बहुत उत्साहरूप होना तथा  
चन्दना स्तवनपूर्वक बहुत आदरतैं पढ़ना सो ज्ञानविनय  
है तथा ज्ञानके आराधक ज्ञानीजनाका तथा जिनागमके  
पुस्तकनिका संयोगका बड़ा लाम मानना सत्कार स्तवन  
आदरादिक करना सो ज्ञानविनय है । बहुरि अपनी शक्ति  
प्रमाण चारित्र धारणमें हर्ष करना दिन दिन चारित्रकी

उज्जलाताके अर्थ विषयकषायनिकृ घटाटना तथा चारित्र के धारकनिके गुणनिर्मै अनुराग स्तवन जादर करना से चारित्रनिय है । घटुरि इच्छाहू रेकि मिले हुए विषयनिर्मै मतोप धारणकरि ध्यानस्वाध्यायमें उद्यमी होय कामके जीतनेहू अर इन्द्रियनिके विषयनिर्मै प्रवृत्ति रोकनेरूँ अनशनादिकतपमें उद्यम करना से तपविनय है । घटुरि इन कषारि अराधना का उपदेशकरि मोक्ष मार्गमें प्रवर्तन करानेवाले हैं तथा निनके स्मरण करनेत परिणामनिका मल दूर होय निशुद्धता प्रगट हो जाय ऐसे पचपरमेष्ठी के नामकी स्थापनाका विषय घन्दना स्तवन करना से उपचार विनय है । अन्य हू उपचार विनय का बहुत भेद है अभिमानकू छाडि अष्टमदका अत्यन्त अभाव जाके हाथ कठोरता छूटि कोमलता जाके प्रगट होय ताके नम्रपना प्रगट होय है ताके मत्यार्थ ऐसा विचार है यो धन ध्यान जीवन क्षणभंगुर है कर्मके आधीन है कोऊ जीव हमतें क्लेशित भवि होहु सकल सम्बन्ध त्रियोग महित है इहा केते काल रहगा समय समय काल सन्मुख अखण्ड गमन करू हू केऊ वस्तुका सम्बन्ध थिर है यहा विनय धर्म ही भगवान मनुष्य जन्मका

सार कक्षा है यो विनय ससाररूप वृक्षके दग्ध करनेकूं  
 आग्न हैं यो विनय है सो त्रैलोक्यपती जीवनिके मन  
 की उज्जलता है अर विनय है सो समस्त जिन शासनको मूल  
 है विनयरहितके जिनेन्द्रकी शिक्षा ग्रहण नाही होय है विनय-  
 रहित जीव समस्त दोषनिका पात्र है विनय है सो मिथ्याश्रद्धा-  
 दानके छेदनेकू छल है विनय विना मनुष्यरूप चामडाको वृक्ष  
 मानरूप अप्रिकरि भग्न होय है अर मानकपायकरिके यहा ही  
 घोर दुख सहै है अर परलोकमे निन्द्यचाति कुरूप बुद्धिहीन  
 चलहोन उपजै है जे अभिमानी यहा किंचित वचनमात्र हू नार्हा  
 महै हैं ते तिर्यचगतिमे नासिकामे मूजका जेगडाका वधन  
 लादन मारण लात ठोकरोका घात चामडाका मरमस्थानमे  
 घात पराधोन हुआ भोगे हैं तथा चाडालनिके मलीन  
 घर मे बन्धनते बन्ध दुरहै हैं जिन ऊपर मलादि  
 निन्द्यमस्तु लादिये है और इस लोकमे हू अभिमानीके  
 समस्त लोक वैरी हो जाय हैं अभिमानीकू समस्त निन्दै  
 हैं महा अपयश प्रगट होय है समस्त लोक अभिमानो  
 का पतन चाहै हैं मानकपायतैं क्रोध प्रगट होय कपट  
 विस्तरै जतिलोम 'करै दुर्वचननिमे प्रवर्तन करै' कलमे  
 जेती अनीति है तितनी मानकपायतैं होय है । परधन

हरणादिक हू अपने अभिमान पुष्ट करनेकू करै है यातै  
 इस जीवका चडा बैरी मानकपाय है यातै बिनय गुणमें  
 सहान आदरकरि अपना दोऊ लोक उज्जल करो सो  
 बिनय देवको शास्त्रको, गुरुनिको मन, वचन, कायतै  
 प्रत्यक्ष करो अर परोक्ष हू करो तथा देव जो भगवान  
 अरहन्त समग्रशरण निभूति सहित गन्धकुटीके मध्य सिंहासन  
 ऊपरि अन्तरीक्ष विराजमान चौसठ चमरानकरि दीज्यमान  
 छत्रयादिक प्रातिहार्यनिकरि निभूषित कोटिस्वर्य समान उद्यात  
 का धारकपरमोदारिकदेहमे निष्ठता द्वादशसमाकरि सेवित दिव्य  
 धनिकरि अनेकजीवनिका उपकार करनेवाले अरहन्तको चिन्तयन  
 करि ध्यान करना सो मनकरि परोक्षबिनय है। याका बिनय-  
 पूर्वक स्तवन करना सो वचनकरि पराक्ष बिनय है। अजुलिजोडि  
 मस्तक चढाय नमस्कार करना सो कामकरि पराक्षबिनय है।  
 वटुरि जो जिनेन्द्रको प्रतिनिम्बकी परम मुद्राएँ प्रत्यक्ष  
 नेत्रनिर्ते अवलोकन करि महा आनन्दतँ मनमे ध्यानकरि  
 अपकू कृतकृत्य मानना सो मन करि प्रत्यक्षबिनय है।  
 जिनेन्द्रका प्रतिबिम्बके सन्मुख होय स्तवन करना सो प्रत्यक्ष  
 वचनबिनय है। अवलि मस्तक चढाय वन्दना करना तथा  
 भूमिमें अंजुलिमहित मस्तक गोडानिका स्पर्शनकरि नमस्कार

करना सो कायकरि प्रत्यक्ष विनय है । तथा सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा जिनेन्द्रका नामका स्मरण ध्यान बन्दना स्तवन करना सो समस्त परोक्षविनय है । ऐसैं देवका विनय समस्त अशुभकर्मनिका नाश करनेवाला कथा है । बहुरि जो निग्रन्थ वीतरागी मुनीश्वरनिक प्रत्यक्ष देखि खडा होना आनन्द-सहित सन्मुख जानास्तवन करना बन्दना करना गुरुनिक आर्गकरि पाछ चलना कदाचित् वरानर चालाना होय तो गुरुनिके गामतरफ चालना गुरुनिक अपने दक्षिण भागमे करके चालना बैठना, गुरुनिक विद्यमान होते आप उपदेश नाहीं करना कोऊ प्रश्न करे तो गुरुनिके होते आप उत्तर नाही देना अर गुरुनिकी इच्छाके अनुकूल उत्तर देना गुरुनिके होते उच्च आमन नाही बैठना अर गुरु व्याख्यान उपदेशादिक करै ताक अञ्जलि जोडि बहोत आदरत ग्रहण करना गुरुनिका गुणनिर्म अनुराग करि आज्ञाके अनुकूल प्रवर्तन करना अर गुरु दूरक्षेत्रमें होय तो गामी जो आज्ञा होय तैम प्रवर्तन करना दूरहीत गुरुनिका ध्यान स्तवन नमस्कारादि विनय करना सो गुरुका विनय है । बहुरि शास्त्रका विनय करना बडा आदरत पठन श्रवण करना द्रव्य क्षेत्र काल सावक व्याख्यानाद करना शास्त्रका कथा व्रत समयादिक आपत नाही बनि सके तो आज्ञा

का लोप नहीं करना सूत्रकी आज्ञा होय तिस प्रमाण ही कहना तथा जो सूत्रकी आज्ञा होय तोर एकाग्रचित्ततै श्रवण करना श्रवण करते अन्य कथा नहीं करना आदरपूर्वक मौनतै श्रवण करना जर जो मशय होय तो मशय दूर करनेकू विनयपूर्वक अल्प अक्षरनिरुति जैसे समा के अर लोकनिके अर वक्ताकै क्षोभ नहीं उपज तैम नियमपूर्वक प्रश्न करना उत्तरइ आदरतै अङ्गीकार करना सो शास्त्रका विनय है तथा शास्त्रकू उच्च आमनपर धरि नीचा बैठना प्रशसा स्तवन करना इत्यादिक शास्त्रका निन्द करना ऐम देव गुरु शास्त्रका विनय है सो धर्म का मूल है । पहुरि जो रागद्वेषकरि आत्माका घात जैसे नहीं होय तैस प्रवर्तन करना सो आत्माका विनय है जातै ऐसा विचारे है अब यो मेरो जीव चतुर्गतिमे मति परिभ्रमण करो अब मेरा आत्मा मिथ्यात्व कपाय अविनयादिक करि ससार परिभ्रमणके दु ख मति प्राप्त होइ ऐसे चिन्तयन करना मिथ्यात्व कपाय अविनयादिक करि आत्माका ज्ञानादिक गुण घात नहीं करना सो आत्माका विनय है याहीकू निश्चय ध्यान कहिये है यह तो परमार्थ विनय कहा अब यहां ऐसा विशेष जानना जाके मान कपाय घटि जाय ताहीके व्यवहार विनय है कोऊ जीवका मोत अपमान मति होइ जो अन्यका सन्मान

करैगा सो आपह मन्मानकू प्राप्त होयगा जो अन्यको अपमान करैगा सो आपह अपमानकू प्राप्त होय है जो समस्तकू मिष्ट वचन बोलेना सो विनय है किसी जीमकू तिरस्कारनाहीं करना सो हू विनय ही है । अपने घर आया ताका यथायोग्य सत्कार करना किमोकू सन्मुख जाय ल्यायना किसीकू उठि खडा होना एक हस्तकू माथे माथै चढायना किमोकू आड्ये ३ इत्यादिक तीन बार रुहि अ गोकार करना कोऊकू आदरकरि नजीक बैठायना किमीन् आमनदान देना किमीकू आनो, बैठो, किसीकू शरीरकी कुशल पूछना तथा हम आपके हैं हमकू आज्ञा करिये भोजनपान करिये यह आपहीका गृह है ये गृह आपके आनेत उच्च भया है आपकी कृपा हमारे पर सनातनतैं है ऐसे हू व्यवहार विनय है तथा कोऊकू हस्त उठाय माथे चढायना एता ही विनय है यह समस्त व्यवहारविनय है और हू दान मन्मान कुशल पूछना रोगी दुखीका बैयायृत्य करना सो भी विनयमानहीके होय है दुःखित मनुष्य तिर्यचननिकू निदास देना दुःखित होय आपका दुःख कहनेकू आया होय ताका दुःख श्रवण करना अपना सामान्य प्रमाण उपकार करना नाहीं बननेका होय तो धीरता मतोषादिकका उपदेश देना ऐसे व्यवहार विनय है सो परमार्थ विनयका कारण है यशकू उप-



जाव है धर्मकी प्रमाना करै है मिथ्यादृष्टिका ह अपमान नाहीं करना मिष्टवचन बोलना यथायोग्य आदर सत्कार करना योही विनय है महापापी द्रोही दुराचारीकू ह कुचन नाहीं करना एकेन्द्रिय विरुद्धेन्द्रियादिक तथा सर्पानिक दुष्टजीव तिनकी विराधना नाही करना याकी रक्षाकरि प्रवर्तना सो ही इनका विनय है अन्यधर्मीनिका मन्दिरप्रतिमादिकनै बेर करि निन्दा नाहीं करना ऐसा परमार्थ व्यवहार देऊ प्रकारहू विनयको धारणकरि गृहस्थक प्रवर्तन करना योग्य है । वेछो सकलमग का परित्यागो बोलरागी मुनिश्चरहू कोऊ मिथ्यादृष्टि बन्दना करै ताकू आशीर्वाद न्यै चाडाल भील धीररादिक अधर्म जाति हू बन्दना करै ताकू पापक्षयास्तु इत्यादिक आशीर्वाद देह तौ विनयअग धारण करो हो तो बाल आनान धर्मरहितका तथा नीच अधर्म जाति होय ताका हू विनय नाहीं करो तो हू विरस्कार निन्दा कदाचित करना उचित नाहीं है इम मनुष्य जन्मका मण्डन विनय ही है विनय विनो मनुष्यजन्मकी एक घड़ी भी हमारे मति जावे ऐसे भगवान गणधर देव कहें हैं ऐसा विनयगुणकी महिमा जानि याका महान अर्थ उतारण करो । हे विनयसपन्नता अग इमारे हृदयमें तू ही निरंतर बाम करि तेरे प्रमादतैं अब मेरा आत्मा कदाचित अष्ट

मदनिकरि अभिमानकू मति प्राप्ति होहु ऐसे नियसपन्नता नाम  
अंगकी दूजी भावना वर्णन करी ॥ २ ॥

अब तीसरी शीलव्रतेष्वनतीचार भावना कहै हैं :—शील-  
व्रतेष्वनतीचारका ऐसा अर्थ वार्तिकमें कया है अहिंसोदिक  
पचनत अर इन वृत्तिका पालनके अर्थ क्रोधादिकपायका वर्ज-  
नादिकरूप शीलविषय जो मनउचन कायकी निदोष प्रवृत्ति  
सो शीलव्रततेष्वनतिचार भावना है शील नाम आत्म स्वभावका  
है आत्मस्वभावका नाश करनेवाला हिंसादिक पांच पाप हैं तित  
मैं कामसेवन नाम एक ही पाप हिंसादिक ममस्त पापनिक पुष्ट  
करै है अर क्रोधादिकपायनिकी तीव्रता करै है तात यहाँ  
जयमालामें ब्रह्मचर्यकी ही प्रधानतारुरि वर्णन करिये है ये  
शील दुर्गतिके दुखका हरनेवाला है स्वर्गादिक शुभगतिका  
कारण है तप व्रत मयमका जीवन है शील बिना तप करना  
व्रतधरना मयम पालना मृतकका अंग समान देखने मात्र है  
कार्यकारी नाहीं तैसे शीलरहितका तप व्रत मयम धर्मकी  
निन्दा करानेवाला है ऐसा जानि शील नाम धर्मका अंगकू  
पालना करहु अर चंचल मनरूप पक्षोकू दमो अतिचार रहित  
शुद्धशीलकू पुष्ट करो धर्मरूपनके निधम करनेवाला मनरूप  
मदोन्मत्त हस्तीकू रोको चलायमान हुआ मनरूपहस्ती महान

अनर्थ कर है हस्ती मदवान होय तदि ठाणमंत निकलि  
 भागै है अर मनरूपहस्ती कामकरि उन्मत्त हात तय समभोव-  
 रूपी ठाणत निकलिभाग है तयो कुलकी मयादा मतोपादि  
 छाडि निकसै है मदेन्मत्तहस्ती तो मांकल तुडाय जाय है अर  
 मनरूपहस्ती सुबुद्धिरूप साकल तोडि बिचरै है हस्ती तो मार्ग  
 में चलावनेवाला महाव्रतकू नाछै है अर कामीका मन सम्य-  
 धर्मके मार्गम प्रवतावनेवाला ज्ञानकू छाडै है हस्ती तो अकू-  
 शकू नाहीं माने है और हनरूपहस्ती गुरुनिके शिक्षाकारो  
 बचनकू नाहों माने है हस्ती तो महाफल अर छायाका देने-  
 वाला वृक्षकू उखाडि पटकै है अर कामकरि व्याप्त मन है सो  
 स्वर्गमोक्षरूप फल का देनेवाला अर यशरूप सुगन्धकू विस्ता-  
 रता सकलविषयाकी आतपकू हरनेवाला ब्रह्मचर्यरूप वृक्षकू  
 उखाडि डालै है हस्ती तो मल कर्दमादिक दूर करनेवाला सरो-  
 वरम स्नानकरि मस्तक उपरि धूलि नाछता धूलिरजस्र कोडा  
 करै है और कामकरि व्याप्त मन सिद्धात्  
 करि अनेक आनरूप मेलकू भोग  
 कोडा करै है हस्ती तो  
 अर कामसयुक्त मन प  
 धारण करै है हस्ती तो

कुबुद्धिरूप हस्तिनीमें रचै है हस्ती ह स्वच्छन्द डोलै मनह  
 स्वच्छन्द डोलै हस्ती तो मदकरिके मत्त है कामी का मन रूपा-  
 दिक अष्टमदकरि मत्त है हस्ती के नजीक तो कोऊ पथिक  
 नोहीं आये दूर भागिनाय अर कामकरि उन्मत्तके नजीक कोऊ  
 एरुह गुण नाहीं रहै है यातैं इस कामकरि उन्मत्त मनरूपी  
 हस्तीक धैराग्ररूप स्वभक्त वाघो यो खुल्यो हुगो महा अनर्थ  
 करैगा यो काम अनग है याकँ अज्ञ नाहीं है यो तो मनजिस  
 है मनहीमें याका जन्म है ज्ञानकू मथन करनेवाला है याहीतैं  
 याकू मनमथ कहिये है ।

सगरको अरि कहिये बरी है यातैं सगरारि कहिये है काम  
 तैं छोटा दर्प जो गर्ज सो उपजै है यातैं याकू कन्दर्प कहिये  
 है या करि अनेक मनुष्य तिर्यच परस्पर विरोधकरि मरि जाय  
 हैं यातैं याकू मार कहिये है याहीतैं मनुष्यनिमें अन्य इन्द्रियन  
 के भोग तो प्रगट हैं अर कामके अगह ढके हुये हैं कानके अग  
 का नाम हू उत्तमपुरुष है ते नाहीं उच्चारण करै हैं यो समान  
 अन्य पाप नाहीं है धर्मतैं अष्ट करनेवाला कान है यो काम  
 हरिहरब्रह्मादिकृ अष्टकरि आपके आधीन क्रिये है याही तैं  
 समस्त जगतकू जीतनेवाला एक काम है याका विजय करने-  
 वाला मोहकू सहज ही जीते है याहीतैं कामके परिहारके अर्थ-

मनुष्यनी तथा देवांगना तथा तिर्यचनी इनका समर्ग सगति कामविकारके उपजानेवाली दूर हीतें परिहार करो स्त्रीनिमें मन वचनकायकरि रागका त्याग करो आप कुशीलक मार्गमें नाहीं चलना अन्यकू कुशीलके मार्गका उपदेश मति करो अन्य शोऊ कुशील के मार्गमें प्रवर्तन करै तिनकी अनुमोदना भव्यजीव नाहीं करै है बालकास्त्रीकू देखि पुत्रोपत् निर्भिकार बुद्धि करो अर मौवनरूप करीन्द्रऊपरि चढी लावण्य जो सौन्दर्यरूप जाका सय अग डूबि रह्या ऐसी रूपवतीस्त्रीमें बहिणवत निर्भिकार बुद्धि करहु अर वाफू सनमान दान मति करो । वचनकरि आलाप मति करो शीलवान हैं तिनकी दृष्टि स्त्रीनिमें प्राप्ति होत ही मुद्रित हो जाय है स्त्रीनिमें वचनालाप करैगा स्त्रीके सगनिका अवलोकन करैगा तार्क शीलका भग अवश्य होयगा तार्तें जो गृहस्थ है तार्क तो एक अपनी स्त्रीविना अन्यस्त्रीनिकी सगति तथा अलोकन वचनालापकरि परिहार अर अन्य स्त्रीनिकी कथाका खण्डनहूमें विचार नाहीं रहै है अर एकान्तमें माता पहन पुत्रीकी सगति हू नाहीं करे है अर मुनीश्वर तो समस्त त्रीमात्रा ही सम्बन्ध नाहीं करे है स्त्रीनिमें उपदेश नाहीं करै है जार्त स्त्रीका नाम ही प्रगट दोषनिकू कहै है । स्त्रीसमोन इस जीवकू नष्ट करनेवाला अन्य कौऊ अर कहिये

वैरी नाहीं तातें उत्तम पुरुष याकू नारी कहै हैं दोष नकू  
 प्रत्यक्ष देखते देखते आच्छादन करे तातें याका नाम स्त्री है  
 याका देखनेकरि पुरुष को पतन हो जाय तातें याका नाम पत्नी  
 है कुमरण करने का कारण है तातें याका नाम कुमारी है  
 याकी सगत करि पौरुषबुद्धिबलादिक नष्ट हो जाय यातै याका  
 नाम अवला है । ससारके बधका कारण है यातै याका नाम  
 बधू है कुटिलतामायाचारका स्वभाव धारे है यातै याका नाम  
 चामा है याका नेत्रनिमें कुटिलता बसे है यातै याका नाम  
 बामलोचना है शीलवतक इन्द्र नमस्कार करै हैं शीलवान  
 पुरुष रत्नत्रयरूप धन लेय कामादिक लुटेरानिका भयरहित  
 निर्भय निर्घाण पुरी प्रीति भग्न करे हैं शीलकरि भूषित रूप-  
 रहित होय तथा मलीन होय रोगादिककरि व्याप्त हो जाय तो हू  
 अपना ससर्गकरि समस्त समानिवाभावना वर्णन करि ॥ ३ ॥

अब अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नाम चौथी भासनाका वर्णन करै  
 हैं । मोआत्मन् ! ये मनुष्यजन्म पाय निरन्तर ज्ञानाभ्यास  
 ही करो ज्ञानका अभ्यासविना एक क्षण ही न्यतीत मति करो  
 ज्ञानके अभ्यास विना मनुष्य पशु समान है यातें योग्यकालमें  
 जिन आगमका पाठ करो अर समभाव होय तदि ध्यान करो  
 अर आश्रनिके आर्थका चिन्तन करो अर बहुत ज्ञानी गुरुजन

तिनमें नम्रता वन्दना विनयादिक करो अर धर्म श्रवण करनेके इच्छुक तिनके धर्मका उपदेश करो याहीके अभीक्ष्णज्ञानोपयोग कहै हैं इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामगुणका अष्टाष्टयनि तैं पूजन करके याका अर्घ उत्तर करो अर पुष्पनिमी अजुली अप्र-  
 भाग निषेक्षेण करो इहा ज्ञानोपयोग है सो चैतन्यकी परिणति है याहीत क्षणक्षणमें निरन्तर चैतन्यकी भावना करना । मेरे अनादिकालतें काम क्रोध अमिमान लोभादिक सग लागि रहै हैं इनका संस्कार अनादितैं मेरे चैतन्यकार्म धुलि रहे हैं अब ऐसी भावना होइ जो भगवानके परमागमका सेवनका प्रभातमें मेरा आत्मा रागद्वेषादिकतें भिन्न अपना जायकस्वभाव रूपहीमें ठहरि जाय अर रागादिकनिके वर्गीभूत नाहीं होय सो ही मेरी आत्माका हित है अथवा नीनशिष्यनिके आगे श्रुतका अर्थको ऐसा प्रकाशकरना जो सशयादिक रहित शिष्यनिका हृदयमें यथावत स्वरूप पदार्थका स्वरूप प्रगट स्वीनिहू मोहित करै है सुखित करै है । अर शीलरहित व्यभिचारी रूपकरि कामदेव समान है तो हू लोकनिमें धुयकार करिये है जात याका नाम ही कुशील है शील नाम स्वभावका है कामी मनुष्य का शील जो आत्माका स्वभाव से छोटा हो जाय यातैं याकू कुशील कहिये है । बुद्धि-कामी मनुष्य धर्मतें आत्माका

स्वभावरूप व्यग्रहाय श्रद्धात चरित्र है यत् याह  
 व्यभिचारी रहिये या ममान जगमे अन्य कुरुम नाहो तात  
 कामक कुरुम रहिये है यात मनुष्य पशुके समान हो जाय  
 यात याह पशुर्म रहिये ग्रह हो जन्म ताका ज्ञानदर्शनादि  
 स्वभावरूप का घात यत् होय है तात याह अग्रह कहिये है  
 जात कुशीलाका संगति कुशीली हाय जाय है जो शीलकी  
 रक्षा करी सो ही शांति तप न्न मयम ममस्त पालया । गुरु  
 जो अपना स्वभावरूप नाहो चलायमान होना ताका गुणाग्र  
 शील कहै है शोठ नामका गुण ममन्त गुणनिर्म पटा है शील  
 करि सहित पुरपरा तो धोटा हू तप तप प्रचुर फलक फलै ह  
 अर शीलनिना वहुत हू तप न्त है सो निष्फल है । इम प्रकार  
 जानि अपने आत्मार्थ शीलको श्रद्धाके अर्थ की करीहू नित्य  
 पूज्यो शीलत मनुष्य जन्महामे है अन्यगतिमे नाहीं है  
 तात जन्म सफल किया चाहो तो शीलकी ही उच्चता का  
 ऐस शीलतपनतीचार नाम समरी द्य जाय पाप पुण्यका मरुतप  
 लोकअलोकका स्वरूप सुनिश्चानका धर्म न स्वरूप सत्यत्व  
 निर्णय हो जाय तस ज्ञानाभ्यास करना तथा अपने चित्तमें  
 ससार देहभोगत रिक्तता चिन्तन करना । ममारदह भोगनि



का यथार्थ स्वभूषण चिन्तन करनेत गगन छाप मोह जानकर  
 विपरीत नहीं करि सके हैं। ममत्ता द्रव्यनिमित्त ए नित्यता  
 हुआ है आत्माका भिन्न अनुभव नये तो ही न तेजोप्रेम  
 है ज्ञानाभ्यास करके विषयनिर्गती गांछा नष्ट होय है क्या  
 निका अभार होय है माया मिथ्या निदान तीन शब्द ज्ञान  
 के अभ्यास करिही नष्ट होय है जानकर अभ्यास ही त मन  
 स्थिर होय है जानकर अभ्यास करके ही एक प्रसारक  
 विरल्य नष्ट होय है ज्ञानाभ्यास करके धर्म ध्यानम गुण  
 ध्यानम अचर होय तिष्ठ है ज्ञानाभ्यासत ही मन न यमक  
 चलायमान नहीं होय है ज्ञानाभ्यास करके ही चित्तेन्द्रिया  
 क्षामन ( जाना ) प्रवर्त है अनुभव धर्मका नाश ज्ञानाभ्यास  
 करके ही होय प्रभावना है चित्तधर्मही जानकर अभ्यास करके  
 ही होय ज्ञानका अभ्यासत लक्षणिका हृदयवैत पूर्व सचय  
 किया ऐमा पापरूप श्रृण नष्ट होय जाय है अनानी धारतप  
 करि कैटि पूर्वम चित्त धर्मक विषय तिम धर्मक जानी  
 अन्तमु हर्तम विषय है चित्तधर्मका स्थम ज्ञानकर अभ्यासही है  
 ज्ञानहोके प्रभावत ममस्त विषयनिर्गती बांछा रहित होय  
 सतोप धारण करिय है जानहीत उत्तमश्रमादि गुण प्रगट होय

है ज्ञानाभ्यास ही अन्यत्रमध्य योग्यअयोग्य ग्रहण करने योग्यता विचार होय है ज्ञान विना परमार्थ अरु व्यवहार दोऊ नष्ट हो जाय है ज्ञानरहित सानुग्रहका निरादर होय है ज्ञान मम न कोऊ धन नाहीं है ज्ञानका दान समान कोऊ दान नाहीं है दुःखित जीवक सुखितक सदा ज्ञानही कारणमे ज्ञानही प्रवेश मे अन्यत्रमे जादर करानेवाला परम धन है ज्ञानवनसे किसी किसी करि न स्या नाय नाहीं किसीक दिये घटे नाहीं ज्ञान ही मन्त्रदर्शन उर नावे है अनहीते मोक्ष होय है मन्त्रग्यान आत्मा का अविनाशा स्वाधीन धन ह ज्ञान विना ममार समुद्रमे डूबतेक हस्तारम्य देय सैन रक्षा करे ? विद्या समान आभूषण माहीं विद्या विना आभूषणमात्रत ही सत्पुरुषनिके आदरने योग्य होय नाहीं है निधानके परमनिधान प्राप्त करनेवाला इक समग्यानही है य तै हे भग्यजीवो ! भगवान् ऋष्यानिधान पीतराग गुरु तुमक य शिक्षाकर है अपनी अत्माक मन्त्रग्यानके अभ्यासही में लगवो अरु मिथ्यादर्ष्टनिकरि प्ररूप्या मिथ्याग्यानका दूरिही ते परिहार करो मन्त्रमिथ्याही परीक्षा करि ग्रहण करो अपना मतानक पढावो अन्यवननिक विद्या करावो जे धन होय अपने वनेक सफल ऋष्या चाहोहातो पढन पढानेवालेक आजीविका-

दिक उग्रसरि धिरता त्रगवो पुष्पाक लिपि देवो गिरा  
 पडतगालक त्वा पुष्पाकानक शुद्ध रंग कण्ठो पठन  
 पठनके अधि स्थान देवो निरन्तर पठन श्रान्ति हा भनु  
 जन्मका जाल व्यतीत करा या अग्रसर व्यतीत हा ता चल्  
 जाय है जेते आयु राम इन्द्रया बुद्धि पनि रही हैं तेने मनुष्य  
 जन्मकी एक घडी हू मन्थज्जन विना मर्ति खाया ज्ञानरूपक  
 परलोकम हू नार जायता इय अमाक्षज्ञान पयागकी महिम  
 र टि निहानि करि हू उर्गन नदी करि पाय हैं याहार्त ज्ञाना  
 पयागकी परमशरण अधि गृह्य धनमहित हाय मा भावन  
 भाय और अर्थ उत्तारण कर और गृह्य त्यागा हाय ते निरन्त  
 भावना भाये अमाक्षज्ञानोपयाग नामा चारी भावना वर्ण  
 करा ॥ ४ ॥

अन पंचमी मवग भावनाका वर्णन कर है—नो समार दे  
 भोगनिते निरक्तवना सा मवग तथा धर्मने अर वर्मका फल  
 अनुराग मो मवग है अपना समार दह भोगनिते निरक्त हो  
 करि धर्मम अनुराग करना मा मवग है । इहा समारन जि  
 पुत्रमू रग करिय है मा पुत्र जन्म लेत ही ता स्त्रीका यौन  
 सौन्दर्यादिक विगारट है जग जन्म नूने पाछे पडो जाइल

बड़ा कष्टकरि धनका खरचकरि पुत्रकू पधाड्ये हैं जर रोगा-  
 दिकुनिहा बड़ा जानता अर क्षणक्षणमें बड़ी साधधानीतैं महा-  
 मोहो महारागी ग्लानिरहित होय बड़ा कष्ट सहिकरि बड़ा  
 करियेहैं बड़ा होय तडि जात्रा भोजनअच्छा रस आलाआभरण  
 आठा म्यानाकू हठतं ग्रहण करै है अरजो मूर्ख होय व्यसनो होय  
 तीव्ररुपायी होत्य ता रात्रिदिन क्लेश होनेका परिमाण नाहीं  
 कहनेमें आर है पुत्रके मोहमें परिग्रहमें बड़ी मूर्छा पवै है अर  
 समर्थ हो जाय अर अपनी आज्ञाम मन्द होय तो महा आर्तरूप  
 हुआ मरणपर्यंत क्लेश नाहीं ठाढ़ ओर जो पिताकू अपना  
 कार्य करनेवाला मममे जेत प्रीति करे है असमर्थ होजाय तांछ  
 रा । नाहीं करे धनरहितका निरादर कू हैं यातैं पुत्रका स्वरूपकू  
 ममझि रागत्यागि परमधर्मसू राग करो पुत्रके अधि अन्यायतैं  
 धनादिपरिग्रहके ग्रहणका परित्याग करो । यहुरि स्त्री हू मोह  
 नाम ठगिनी महापाशी है ममता उपजावनेवाली है वृष्णाकू  
 पधावनेवाली है स्त्रीमें तीव्रराग हे सो धर्ममें प्रवृद्धिका नाश करै  
 है लोभकू अत्यन्त पधावे है परिग्रहमें मूर्छा पधावे है ध्यानम्या-  
 ध्यायमेंप्रिय करै है नियनिमें अन्ध करनेवाली है क्रोधा  
 दिकू च्यारो कषायनिकी तीव्रता करनेवाली है संयमका घात

करनेवाला है उलझावपूर्ण है दुष्प्रधानका स्थान है मरण विगा-  
 र्णवादी है इत्यादि। उपनिषद् मूलसारमय जानि स्वीकृत तत्त्व  
 रागभाव छाड़ि वातराग प्रभृत् अपना मान्य करा। यहुरि  
 कृत्रिमालोक मित्र न प्रियनिश्च उन्मत्तजन हाथ है समस्त त्र्यम्-  
 ननिभ महदरी है धनवान् दर्यो है तिनके अनेक प्रकार  
 प्रकार विनाश कर है निश्चयन काउ सभाषण हुनाति  
 कर है ताते भा जानान्न हा जो समारपतनका भय है  
 ता अयममस्तति मित्रता छाड़ि परपरार्थने अनुराग रत्न अर  
 सभार निरन्तर जन्म मरण रूप है पर जन्मादन्त हा मरणक  
 मन्धुस्य निरन्तर प्रमाण कर है अतानन्तकाल जन्ममरण करते  
 भया तात पच परिवर्तनरूप मरगत विरागता भाया अर ये पच  
 इन्द्रियनिक विषय ह त आत्माका स्वरूप भुलावनेवाले है  
 तज्जाक बधावनेवाले है अज्ञातक रग्नेवाले है विषयनिकीभी  
 आत्मा तैलाभ्यन अन्य नाहा है विषय है त नरकादिदुःखति  
 क कारण है अमर्त पराङ्मुख कर है उपायनिक बधावनेवाले  
 है अपना उल्याण चाहें तिनक दूरदोते त्यागने योग्य हैं।  
 ज्ञानक विरात करनेवाले है तिनके समान मारनेवाले है विप  
 अर अभिममान दाहक उपनानेवाले ह तातेविषयनिर्त रागछाड़ना

ही परम कल्याण है अर शरीर है सो रोगनिक। स्थान ह महा-  
 मलान दुर्गम मत्प्रेयसुंमय ह मलमूत्रादिकपरि भरो ह वत्तपित्त-  
 कफमय है परनो जावांस्त हलन चलनादिक करै है मामता  
 बुवावृषासी बदन। उपचार है ममस्त अशुचितन पुन है दिन  
 दिन जीर्ण होत। चला जाय है कोटिनि उपाय करके ह ग्वा  
 मिया हुआ मण्डू प्राप्त होय है ऐसा दर्हा गिरागजा ही श्रेष्ठ  
 है ऐसे पुत्र मित्र स्त्रिय नमार भोग शरीर का दुःख कलेशका  
 मरूप जानि गिरागमत्व प्राप्त होना सो भवेग है । भवेग ना  
 बायुं निरन्तर चिंतन करना ही श्रेष्ठ ह या मेर हृदयभ  
 निरन्तर भवेग भावना तिष्ठो ऐसा चिन्तन करते सदा देह  
 भोगमित्त निरक्तता होय तदि परमधर्म अनुगम होय है ।  
 धर्मशब्द का अर्थ ऐसा जानना जो वस्तु का स्वभाव है तो धर्म  
 है तथा उत्तमश्रमादि दशलक्षणरूप धर्म है तथा रत्नत्रयस्वरूप  
 धर्म है तथा जीवनिका दयाम्प धर्म है ऐसे पर्यायबुद्धि शिष्यनि  
 के समझानेके अर्थ धर्मशब्द व्यापारप्रकारकारि वर्णन किया  
 है तो ह वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दशलक्षण है अमादि  
 दश प्रकार आत्माका हो स्वभाव है अर मय्यदर्शन स्थानचरित्र  
 ह आत्मार्थ भिन्न नाहीं है और दया है सो ह आत्माही का  
 स्वभाव है सो ऐसा विवेकपरि कथा आत्माका स्वभावरूप दश

लक्षणधर्ममें जो अनुराग हो भग्न है अरु वषट्कारहित चरित्र  
 धर्ममें अनुराग करना सो सबग धर्म है तथा मुनीश्वरनिम्न आ  
 श्रारकका धर्ममें अनुराग हो भग्न है तथा जीवनीश्वर श्लाघन  
 रूप जोरनिका दयाम पण्डितान्न हाना सो भग्न भग्न भग्न  
 अवरा वस्तुजो जात्यों ताका स्वभाव स्वभाव स्वभाव  
 तिस स्वभावमें लीन होना सो प्रथमा स्वरन येत्य भग्न है जो  
 धर्ममें अनुराग परिणाम हो भग्न है तथा धर्मका फल उत्प-  
 न्तमिष्ट जानना सो भग्न है ये तीर्थस्वपना चरित्रता हाना  
 नारायण प्रतिनारायण फलभद्रादिक उपजना सो धर्महान फल  
 तथा वाधारहित रेखली हाना तथा स्वर्गादिरनिम मन्त्रान  
 ऋद्धिका धारक देव होना तथा इन्द्र होना तथा अनुरादिक  
 विमानमें अहमिन्द्र होना सो भग्न पूर्वजन्ममें आराधन शिवा  
 धर्म का ही फल है बहुतार जाह जा भागभूमिआदिकमें उप-  
 जना राजमन्मदा पायना अखण्ड ऐश्वर्य पायना अनेक देशनिमें  
 आज्ञाधन प्रवर्तना प्रचुर सम्यदा पायना रूपकी अधिरुता पायना  
 फलही अधिरुता चतुरता महान पण्डितपना सर्वलक्ष्मी मान्यता  
 निर्मलयशकी निरयातता बुद्धिही उज्ज्वलता आचारकारी धमात्मा  
 बुद्धिम्बका सयोग होना सत्पुरुषनिही संगति मिलना रोग

सहित, होना दीर्घ आयु-इन्द्रियनिको उज्जलता, न्यायमार्गमें प्र-  
 र्तना बचनको मिष्टता इत्यादिक उत्तमगामग्रीको, पावना है-  
 साहू काऊ धर्ममें प्राप्ति करी है तथा धर्मात्मानिका सेवन किया  
 है धर्मका, तथा धर्मात्मानिको, प्रशंसा की है, ताका फल है ।  
 कल्पवृक्ष चिन्तामणि समस्त, धर्मात्माके द्वारे, खड़े, जानू ।  
 धर्मका फलकी महिमा काऊ कोटि जिह्वा निकरि कहनेका समर्थ  
 नाहा हाइये है । ऐसे धर्मके फलका ज्ञानकर्म उत्कृष्ट जानै  
 है ताका सवेग भावना होय है । - बहुरि, धर्मसहित, साधर्मिनीका  
 देखि जननन्द उपजना तथा धर्मकी कथनीमें आनन्दमय होना  
 और वागवित विरक्त हाना वा सवेग नामा पंचमअङ्ग है याकू  
 आत्माका हित समझि याका निरन्तर भावना भावों अर भावना  
 के आनन्दकरि सहित, होय याकी प्राप्तिके अर्थियाका महाअर्थ  
 उतारण करो । ऐस सवेगनाम पंचम भावना वर्णन करी ॥-५ ॥  
 अथ शक्तिप्रमाणत्याग भावना वर्णन करिये है । त्यागनाम  
 भावना प्रदत्तायाग मनुष्य जन्मका मण्डन है । अपने हृदयमें  
 त्यागभाव रचने के अर्थ अनेक उत्तमरूप वादित्रनिक्र बजाय  
 याका महान अर्थ उतारण करो । राज्य अभ्यतर दाय प्रकार  
 का परिग्रहें भमता आडनेकरि त्यागधर्म होय है । - अन्तरङ्ग  
 परिग्रह ओदह प्रकार है सो ऐसे-जानना । - आप्याधिना, ग्रहण  
 न्याग वृथ है । - मिथ्यात्ति, अर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसक  
 वेदरूप परिणाम सो वेदपरिग्रह है । - होम्य, रति, अरति,



शोक भय जगुप्सता, राग, द्वेष, क्रोध, मान, पाया, लाभ ऐसे चौदह प्रकार अन्तरंग परिग्रह जनाया । तदा जो शरीरादिक परद्रव्यनिर्म आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्व नम परिग्रह है । यद्यपि जो वस्तु है सो अपना द्रव्य अपना गुण अपना पर्याय है सो ही अपना स्वरूप है । जैसे सुवर्णनाम द्रव्य है सुवर्णके पीतादिक गुण हैं कुण्डलादि पर्याय हैं सो ममस्त सुवर्ण ही हैं यात सुवर्ण अन्यवस्तुका नाहीं अन्यवस्तु सुवर्णका नाहीं सुवर्ण है सो सुवर्णहारा है अन्य वस्तुका कोऊ हुआ नाहीं हो है नाहीं होयमा नाहीं अपना स्वरूप है सो ही आपका है ऐसैं आत्मा है सो आत्माहो का है आत्माका अन्य कोऊ ही द्रव्य नाहों है । अब जो देहक आपा माने है जा मैं गौरा, मैं सायला, मैं राजा, मैं शक, मैं स्वामी, मैं सेनक, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र, मैं पृद्ध, मैं बाल, मैं बलवान, मैं निरल, मैं मनुष्यमै तिर्यच इत्यादिक कमकृत निनाशोक परद्रव्यकृत पर्यायमें आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्वनाम परिग्रह है । मिथ्यादर्शनतैं ही मेरा गृह, मेरा पुत्र, मेरा राज मैं ऊच, मैं नीच इत्यादिक मानि ममस्त पर पदार्थनिम आत्मबुद्धिकरै है पुद्गलका नाशक अपना नाश माने है याके बधनेतैं अपना उधना घटनेतैं घटना मानि पर्यायम आत्मबुद्धिकरि अनादिकालतैं आपा भूलि रहा है यातैं ममस्त परिग्रहम आत्मबुद्धिका मूल मिथ्यात्वनामपरिग्रह है जाके मिथ्याग्यान नाहीं सो परद्रव्यनिमैं 'हमारा' ऐसैं कहता हुआ है

परद्रव्यनिर्मे कदाचित् आपा नही माने है । बहुरि वेदके उदय  
 तं स्त्रीपुरुषनिर्मे जो कामसेवनके परिणाम हाय हैं तिम कामम  
 तन्मय होय कामके भावक आत्ममाय मानना सो वेदपरिग्रह है ।  
 बहुरि, धन, ऐश्वर्य, पुत्र, स्त्री, आभरणादि परद्रव्यादिकमे  
 आसक्तता सो रागपरिग्रह है-अन्यका विभव परिहार ऐश्वर्य  
 पाडित्यादिक देखि वैरभाव करना सो द्वेषपरिग्रह है हास्यमे  
 आसक्त होना सो हास्य परिग्रह है अपना मरण होनेतें मित्रनिका  
 परिग्रहादिकनिकार प्रियोग होनेतें निरन्तर मयमान रहना सो भय  
 परिग्रह है पचडन्द्रियनिकार बाछित भोगउपयोगके भोगनिर्मे  
 लीन हो जाना सो रतिपरिग्रह है । अनिष्टप्रस्तुता मयोगमे  
 परिणामनिका सकलेशरूप होना सो अरति परिग्रह है अपना इष्ट  
 स्त्रीपुत्रामित्रधनजीविकादिकका प्रियोग होते तिनका सयोगकी  
 बाछा करके सकलेशरूप होना सो शोक परिग्रह है । बहुरि घृणा-  
 मान पुढर्गालनिके देखनेतें श्रवणतें चिन्तनतें परिणाममें ग्लानि  
 उपजना सो जुगुप्सा नाम परिग्रह है । अथवा अन्यका उदय  
 देखि परिणाममे क्लेशत होना सुहावे नाही सो जुगुप्सा परिग्रह  
 है । बहुरि परिणाम रोषरुति तप्त होना सो क्रोध परिग्रह है बहुरि  
 उच्च कुल, जाति, धन ऐश्वर्य, रूप बल, ज्ञान बुद्धि इनकरि  
 आपक अधिक जानि मद करना तथा परक घाटि जानि निरा-  
 दश करना कठोर परिणाम रखना सो मानपरिग्रह है अनेक कपट-  
 छलादिककरि चक्रपरिणाम रखना सो मायापरिग्रह है । परद्रव्यनि

के ग्रहणमें तृणा मो लोप परिग्रह है । तर्मे ममार परिधेमणके  
 वाग्य आत्माके वागादिश गुणनिक घातक चीन्हा प्रसार अन्त  
 रग परिग्रह है अर इनतीत मूत्राके कारण धनधान्यत्रेयसुवर्णा-  
 दिक स्त्रीपुत्रादिक घेतन अयेनन वाग्य परिग्रह हैं तर्मे अन्तर ग  
 बाहिर ग दाय प्रकारके परिग्रहक त्यागनते त्याग धर्म हाय है ।  
 यद्यपि वाग्यपरिग्रहगृहित तो दर्शितो मनुष्य श्रमापद्योत हाय हैं  
 परन्तु अभ्यन्तर परिग्रहका त्याग धर्म दुर्लभ है । याते दाय  
 प्रकारका परिग्रह एक दशत्याग तो आत्मके हाय है अर मरुत-  
 त्याग सुनीदरनिके हाय है बहुति कषायनिक। त्यागते त्याग  
 धर्म हाय है बहुति इन्द्रियनिक। शिष्यनित रोकने करि त्याग  
 हाय है । बहुति रमनिका त्यागकरि त्यागधर्म हाय है । जानै  
 रमना इन्द्रियकी लोलुभता जीतनेते ममस्त पापनिक। त्याग  
 सहज हाय है । बहुति चित्तेन्द्रका परमागमका अध्ययनका  
 अन्यत्र अन्ययन कराना शास्त्रनिक। लिखाव देना शोधना  
 पुधापना सो परम उपकार करनेवाला त्यागधर्म हाय है ।  
 बहुति मनक दुष्टविरूपनिक। अभाव करना दुष्टविरूपनिके  
 कारण छाडि चारि अनुयाग की चर्यामें चित लगाना सा  
 त्यागधर्म है । बहुति मादका नाश करनेवाला धर्मका उपदेश  
 श्रावकनिक। देना सा महापुरुषका उपजायनवाला त्यागधर्म है ।  
 चीतरागका उपदेशते अनेकप्राणीनिक। परिणाम पपते मयमोद  
 होय है धर्मके प्रभावतः अनेक प्राणी प्राप्त होय हैं । बहुति उच्च

मध्यम जपन्यायेन तं न प्रकारके पात्रनिक्रमः भक्तिरिति युक्त  
 हाय प्राप्तादान देना प्रासुक्योपपत्ति देना ज्ञानके उपदेष्टव्य  
 मित्रातके पदनेयाग्य प्रस्तुतका दान देना मुनिके योग्य तथा  
 श्रावकके योग्य प्रसिद्धा दान देना गुणनिके धारकनिके तपकी  
 वृद्धि करनेवाला साध्यायमें लीन करनेवाला ध्यानकी वृद्धिका  
 कारण आहारादिक चारि प्रकारके दान परम भक्तिमें प्रकसित  
 चित्त हुआ अपना जन्मकर्म कृतार्थ, मानता गृहचाराङ्ग सफल  
 मानता बड़ा आदरमें पात्रदान करो । पात्रदान होना महाभाग्यमें  
 जिनका भला होना है, तिनके होय है पात्रका लाभ होना ही  
 दुर्लभ है और भक्तिमहित पात्रदान हाय जाय ताकी महिमा  
 करनेके कौन समर्थ है यहुरि श्रुतपितृकारि जो पीडित हाय  
 तथा रोगी होय दरिद्रो होय रुद्ध होय दीन होय तिनके अनु  
 कृपाकरि दान देना सा समस्त त्यागधर्म है । त्यागहीन मनुष्य  
 जन्म सफल है । त्यागहीन धनधान्यादिना पात्रना सफल है  
 त्यागविना गृहस्थका गृह है सो सममान समान है अर गृहस्थका  
 स्वामी पुरुष मृतक समान है और स्त्री पुत्रादिक गृहपत्नी समान  
 है सो याज्ञ धनरूप मास चूटि चूटि गाय है ऐमें त्यागभाजना  
 वर्णन ॥ १ ॥ ६ ॥ अब शक्तिप्रमाणतप भाजना अङ्गीकार करना  
 कप्रोक्ति यो शरीर दुःखको मारण है । अनेके दुःख यो शरीर  
 उपजाव है और यो शरीर अनिरूपमें अस्थिर अशुचि हाका न-  
 वत् है कीटया उपकार करता है जैसे कृतम अपना नाही हाय

तैसै देहके नाना उपकार सेवा करता हू अपना नाहीं होय है  
 यत्तै यथेष्ट रिधिरि नाहू पुष्ट करना योग्य नाहीं कुश करने  
 योग्य है ता हू ये शुणकरत्नत्रयके मचयका कारण है शरीर  
 बिना रत्नत्रयधर्म नाहीं होय हू सेवककी ज्या योग्य भोजन देव  
 यथाशक्ति जितेन्द्रका मार्गतै विरोधरहित कायकेशादि तप  
 काना योग्य है । तप बिना इन्द्रियनिकी विषयनिर्म लोलुपता  
 घटे नाहो तप बिना त्रैलोक्यका जोतनेगला कामरू नष्ट करने  
 हू समर्थता होय नाहीं तप बिना आत्मा अन्त करने लो  
 निद्रा जीतो जाय नाहीं अर तपबिना शरीरका मुखिया सभाय  
 मिटे नाहो जो तपके प्रभावत शरीररू माघि राख्या हाय ता  
 श्रुता तृपा शीत उष्णादिक परापह अरे कायरता उपजै नाहीं  
 मयमधर्मत चलायमान होय नाहीं तप है मा कर्माका निर्भरता  
 कारण है । तत्तै तप ही करना थप्ट है । अरना बायहू नाहीं  
 छिपाय करिऊँ जैम जितेन्द्रके मार्गतै विरोधरहित हाय तैसै तप  
 करो तपनाम सुमटका सहाय बिना ये अपना थद्वान ज्ञानआच-  
 र्णरूप धनरू काम क्रोध प्रमादादिक लुटर एकरुणमे लुट  
 लेवगे तदि रत्नत्रयमपदाकरि रहित चतुर्गतिरूप समारम दीध  
 काल अमण करोगे याहीतै जैसे वात पित्त कफ ये त्रिदोष विप  
 रीत हाय, रोगादिक नाहीं उपचारै तैम तप करना उचित है  
 नमस्तमे प्रधान तपतो दिगम्बरपणा है कैसा है दिगम्बरपणा  
 जो घरकी ममत्तारूपपासीरू छेदि देहका नमस्तम मुखियापणा

छाडि अपना शीरतै शीत उष्ण, तावडा वर्षा पवन डाम मच्छर  
 मक्षिकादिफनिकी बाधाके जीतनेकू सन्मुख होय कोपीनादिक  
 समस्त वस्त्रादिकको त्यागकरि दशदिशारूपहो जाय वस्त्र हैं ऐमा  
 दिगम्बरपणा धारण करना सो अतिशयरूप तप जानना जाका  
 स्वरूपकू लेखते श्रमण करते बड़े बड़े शूरवीर कम्पायमान हो  
 जाय हैं तातैं भो शक्तिई प्रगट करनेगलें होजो सत्सारके ग्रन्थन  
 से छूटया चाहो तो जिनेश्वर सम्मन्धो दोषा धारण करो जातैं  
 अगका सुखियापणा नष्ट होय उपमर्गपरीयह सहनेमें कायरताका  
 अभाव होय सो तप है । जातैं स्वर्गकोरुकी रमा अर तिलो-  
 क्षमा हू अपने-हाथभावतिलामरिभ्रमादिककरि मनकू कामका  
 विकारपहित नाहो कर सकैं ऐमा कामकू नष्ट करैं सो तप है-।  
 जो दाय प्रकारके परिग्रहमें इच्छाका अभाव हो जाय, सो तप है  
 जो इन्द्रियनिके प्रियवनिमें प्रवर्तनेका अभाव हो जाय सो तप  
 है तप वही जो निर्जनवन अर पर्वतपरका भङ्कर गुफा जहां  
 भूतराक्षसादिकनिके अनेकविकार प्रवर्तैं अर सिंहव्याघ्रादिकनिके  
 भयङ्कर प्रचार होय रहे अर कोठ्या वृक्षनिकरि अन्धकार  
 होय रखा अर जहां सर्प, अजगर, रीछ चीता इत्यादिक  
 भयकर दुष्टतिर्यचनिका संचार होय रखा ऐसे महा विषमस्थान-  
 निर्म-भयपहित हुआ ध्यानस्वाध्यायमें निराकुल हवा तिष्ठे सो  
 तप है । जो आहारका लाभ अलाममें समभावके धारक, मीठा  
 खटाटा, किडवा, कपायला, ठण्डा, ताता, मरम, नीरस, भोजन

जलादिकरें लालेमारहित मतोपम्य अमृतका पान करते आनन्द  
 म तिष्ठ सो तप है । जो दुष्ट देव दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यननि  
 र्गि क्रिये घोर उपमेर्गनिर्गु आते कायगता छाडि रम्पायमान  
 नाहो हनिसो तप है । जातै चिरकालका मचय किया र्म  
 निर्त्ररै सो तप है । गुरि जो बुरचन रहनेगले निचडाप  
 लगावनेगले, ताडन, मारन अग्नि जलनादि उपद्रव करनेगलेमें  
 द्व पशुद्विकरि कलुषित परिणाम नाहो करना अरु स्तुतिपूजनादि  
 करनेगलेमें राग भावका नाहो उपजना सो तप है । गुरि पच-  
 महान्तनिका अरु पचसमितिका पालन अर्पण इन्द्रियनिका निरोध  
 करना अरु छह आग्यरु समयका समय करना अपने  
 मन्त्रके डाढी सुछके कशनिकु अपने हस्ततै उपरामका दिन  
 में उपाडना देय भहोना पूण पप उत्कृष्ट लोच है मध्यम तान  
 भहोने गये लोच करे जयन्य चार भहोने गए लोच कर है मो  
 लोच करना हु तप है अन्य भेषनिकी ज्यो राचीना १०५ नाहो  
 उपाडे है शीतकाल, ग्रीष्मकाल, वर्षाकालमें नग्न रहना अरु  
 स्नान करनाही करना अरु भूमिप्रयनरि अल्पकाल निन्द्रा लेना  
 दंतनिकु अगुलिकरि हु नाहो घावना अरु एस्कार भाजन राडा  
 भोजन रसनीरसस्वादछ छाडिक् भोजन करै ऐसे अट्टाडस मूलगुण  
 अखण्ड पालना सो बडा तप है इन मूलगुणनिके अपातै घातिया  
 कर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानक प्राप्त हाथ मुक्त हो जाय है ।  
 यतैं मो शोनीजन ही धर्मका अगयो तप है याकी निर्विष

प्राप्तिके अर्थ याहोका स्तवन पूजनादिकरि याका महाअर्थ  
उत्तारण करा । यात दूरि अर अत्यन्तपरोपकार मोक्ष तुम्हारे  
अतिनिरुद्धताके प्राप्त होय है, ऐम शक्तिसत्यागनामा सप्तमी  
भायनाका वर्णन क्रिया ॥७॥ मायुममाधि नामा, अष्टमी  
भायनाक कहै है । जैसे भण्डारम लागी हुई अग्निक, गृहस्थ  
है सो अपना उपकारक वस्तुका नाश जानि अग्निक दुष्टादये, है  
क्योकि अनेक वस्तुको रक्षा होना बहुत उपकारक है तस अनेक  
व्रतशालादि अनेक गुनिकरि महित जा व्रती सयमी तिनके  
कोला कारणतें निम्न प्रगट होतें निम्न दूरिकरि नत शीलकी  
रक्षा करना सो ममाधि है । अथवा गृहस्थके अपने परिणामक  
विगाडनेवाला मरण आ जाय उपमर्ग आ जाय रोग आ जाय  
इष्टनियोग हो जाय अनिष्टमयोग आ जाय तदि भय नही  
प्राप्त होना सो मोघु समधि है । ममयानी ऐमा विचार क  
हे आत्मन् ! तुम अखण्ड अग्निनाशी ज्ञानदर्शन स्वभाव हो  
तुम्हारा मरण नही जा उपज्या है सो निशेगा पर्यायका  
निनाश है अतन्य द्रव्यका निनाश नही है वाच इन्द्रिय, अर  
मनबल, कायबल, वचनबल, आयुबल अर दस्यास ये दशग्राण हैं  
इनका नाशक मरण कहिये है । तुम्हारा ज्ञानदर्शन सुखमत्ता  
इत्यादिक भावग्राण हैं तिनका कदाचित् नाश नही है तत देह  
का नाशक अपना नाश मानना सो मिथ्याज्ञान है । भो  
ज्ञानिने ? हजार कर्मनिकरि मत्वा हाडमासमय दुर्गन्ध निना-



शरीर देहका नाशहीत तुम्हारे कहे भय है तुम तो अविनाशो  
 ज्ञानमय हो। यो मृत्यु है सो उड़ा उपकारा मित्र है जो गलिया  
 सज्ज। देहमें तो काटि तुमके देवादिकनिका उत्तमदेह धारण करगै  
 है मरण मित्र नाही होता तो इम जहमें घेतैरुकास घसता अर  
 रोगका अर दुःखनिका मर्या देहमें कौन निवासता अर ममाधि  
 मरणादिकरि आत्माका उद्धार कर्म होता अर अतनयमयमरा  
 उत्तमकर मृत्युनाम मित्रका उपकाररिना कर्म पावत। अर पावत  
 कौन भयमोत होता अर मृत्युरूप कल्पवृक्षना चारिभाराधना  
 का शरण गृहण कराय ममात्मा रूप कर्मपत्र कौन काढता तात  
 सत्कारमे जिनका चित्त आवक्त है अर देहके अना रूप जानै है  
 तिनके मरणका भय है मर्यादष्टि दहते अपना स्वरूपर भिन्न  
 जानि भय प्रप्त नाहा हाय है तिनके साधनमाधि होय है  
 अर जो मरणके अग्रमय उदाचित रोगदुःखादिर आये ह सो  
 हू सम्यग्दष्टिक देहके ममत्त छुड़ावनेके अर्थी है अर त्याग  
 सपमादिकके सन्मुख करनेके अर्थी है प्रमादके छुड़ाये मर्याद  
 दर्शनदिक चारिभाराधनामें दृष्टाके अर्थी है अर ज्ञानी निचार  
 जो जन्म घल्य सो अग्रम मर्या ना कारर होइगा तो मरण  
 नाही छाडैगा अर धार हाय रहैगा तो मरण नाहो छाडैगा  
 तातें दुर्गतिका कारण जो ममत्तते मरणतारु धिक्कार  
 होइ अर ऐसा साहमेत मर जा दह मरि जाय अर मेरा  
 ज्ञानदर्शनस्वरूपका मरण नाही होय ऐसे मरण करना उचित है



ममस्त क्रिया पुण्यका बन्ध करनेवाली है सम्बन्धर्जन सहित । त  
दि सत्कारका छेद करे सा ही अमानुशामनम रुद्धा है—

सम्बोधवृत्ततपसा पापाग्रयव गौरव पु स ।  
पूज्य महामणे रिख तदेव सम्यक्त्वमयुक्त ॥ १ ॥

अर्थ—पुरुषके समभाव अर नान अर चारित्र अर तर  
इनका महानपणा पापाणरा महानपणाके तुल्य है अर ये ही जे  
ममनाथ चरित्र अर तर आ सम्यक्त्व सहित होय तो महामणिकी  
तरह पूज्य हो जाय ।

भावार्थ—जगतिम मणि है सो हू पापाण है अर अन्य  
झाझडा पत्थर है सो हू पापाण है परन्तु पापाण तो मण दाय मण  
हू पाधि ले जाय बेचे ता हू एक पोसो उपजै ताते एर दिन  
हू पेट नही भरे अर मणि केई रती हू ले जाय बेचे तो हजार  
रुपया उपजै ममस्त जन्मका दारिद्र नष्ट हो जाय तैम ममभाव  
अर शास्त्रनिका नान अर चारित्रधारण अर धार तपश्चरण य  
सम्यक्त्वविना बन्तुतल धारण करे तो राज्यमम्यदा पारै तथा  
मन्दकपायके प्रभावतै दबलोत्तम जाय उपजै फिर एक इन्द्रियादिक  
पयायनिमे परिभ्रमण करै अर जो सम्यक्त्व सहित ॥ १ ॥ तो  
समार परिभ्रमणको नाशकरि मुक्त हो जाय-ताते सम्यक्त्वविना  
मिथ्यादृष्टि है सो जिनरू पूजा वा गुरु बन्दना करो ममत्तरणाम  
जावो, श्रुतका अभ्यास कहे तब करो तो हू अनन्तकाल, समार

वाम हो करैगा इस तीन भवमे सुख दुःखको समस्त सामग्री  
 यो जोय अनन्ताचार पाई कोऊ ह् दुलभ नाही एक साधुसमाधि  
 जो रत्नत्रयका लब्धिक निर्विघ्न परलोकताई लजाना है सो रत्न-  
 त्रय सहित हुग दहकू छाडै है तिनके साधुसमाधि होय ताका  
 पायना ही दुर्लभ है साधु समाधि है सो चतुर्विंशतिनिमे परिभ्रमण  
 के दुःखका अभायरु निश्चल ध्याधान अनन्तसुखकू प्राप्त करै  
 है जो पुरुष साधुसमाधि भावनाकू निर्विघ्न प्राप्त होनेकू अर्थि  
 इस भावनाकू भावता याका महान अर्थ उतारण करै सो ही  
 शीघ्र ससार समुद्रकू तिर अष्टगुणनिका धारक विद्धि हाय है  
 ऐस साधुसमाधिनामा अष्टमोभावना वर्णन करो ॥ ८॥ अत्र  
 वैयावृत्तिनामा नवमी भावनाका वर्णन करिये है । कोठा अर  
 उदरकी व्यथा जो आमघात सग्रहणी कठोदर सफोदर नेत्रशूल  
 कर्णशूल शिरःशूल दन्तशूल तथा ज्वर कामर्याम जरा इत्यादिक  
 रागनिरुति पोडित जे मुनि तथा श्रामकू तिनकू निर्दाप आहार  
 औषधि वस्तिकादिक करि सेवा करना तिनकरि शुश्रूषा करना  
 प्रिय करना आदर करना दुःख दूरि करनेमें यत्न करना सो  
 ममस्त वैयावृत्त्य है जे तपकरि तप्त होय अर रोगकरि युक्त  
 निनका शरीर होय तिनके वेदना देखकर तिनके अर्थि प्रासुक  
 औषधि तथा पथ्यादिककरि रोगका उपशम करना सो नवमा  
 वैयावृत्त्य मुनीश्वरनिके दशभेद करि दश प्रकार है । आचार्य,  
 उपाध्याय, तपस्वी, शैष्य, ग्लान, गण, शूल, सघ, साधु, मनाज्ञ ;

इनदश प्रकारक मुतावरतिक परस्पर वैयोवृत्त्य हाय ह कार्यको  
 चेष्टाकी वा अन्यद्वयकी दुख वदनकी दुः करनेम व्यापार  
 करिये प्रयत्न करिये सा वैयोवृत्त्य ह । इन दश प्रकारक मुनिन  
 का एव शब्दा जानना निनत रोगमात्रक सुखक मोन न बत  
 तिनन अत्र सहित गहन करिक भयभाव आन हितक अर्थि  
 आचारण किए ॥ मन्त्रजानादिगुणनिक धारक आचार्य ह ।  
 भाषाय—निनन मातक रोगक मायक बत आचारण करिये  
 ते आचार्य ह निनका समापक प्राप्त हाय आगमक अध्ययन  
 करिये त त्रन शालग्रतक आधार ऐसे उपपदाय ह महां अन  
 शनादि तथम विष्ठ त तथमो ह जे अतक शिगमम तदगनिर-  
 न्तर प्रतनिका भावनाम तत्पर ते अरूप ह राग,दिरुकरि जाका  
 शरीर कर्मेगत होय मा ग्लान ह बुद्धमुनिनिका, परिपाटीका  
 होय मा गण ह आपक दाधा देनेगला आचार्यका शिष्य हाय  
 सा बुल ह । व्यासप्रकारके मुनिका समूह मा मय ह चिरकालका  
 दीक्षित हाय मा मानु ह जा पण्डितगणेकरि उक्तपणेहि ऊचे  
 उल्लरि लोकरिने मान्य होय धर्म का गुरु कुलका गारवणा  
 का उपविश करनेगला होय सो मनोरु ह अवश । अमयतमम्प-  
 दिति ह मभारका अभाव रूपरगित मनोरु ह । इनदश प्रकार-  
 केनक रोग आ जाय परिपहनिकरि खेदित होय तथा श्रद्धानादि  
 विगडि निषयादिक प्राप्त हल जाय तो प्रासुक औपधि  
 मे ॥ नरान योग्य स्थान आसन काष्ठफलक, तृष्णादिकनिका

सम्तरादिकनिकरि अर पुस्तक पोछिकादिक प्रमोषकरणकरि जो  
 प्रतिहार उरकार करिये तथा सम्पत्तियुक्त लेखि स्थापन करिये  
 इत्यादि उपकार सो प्रयाच्यत है । अर जो रात्र भोजन पान  
 ओषधादिक नाहो सम्भरते होय तो कायकरके कफ तथा नाशि  
 कामल मृत्रादि दूर करनेकरि तथा उनक अनुकूल आचरणा  
 करनेकरि प्रयाच्यत हत्य है इस प्रयाच्यमे समयका स्थापन  
 ग्लानिको अभाव अर प्रयत्नम वात्मस्वयणो अर मनाथपणा  
 इत्यादि अनेक गुण प्रगट हाय है प्रयाच्यतो परम वर्म है प्रया  
 च्यत नाहीं होय तो मोक्षमार्ग मिगडि जाय आचार्यादिक कहै ते  
 शिष्य मुनि तथा रोगी इत्यादिकका प्रयाच्यत करनेत वस्तु  
 प्रियुद्धता उच्चताक प्राप्त हाय है एमे हो आचार्यदिक मुनिका  
 प्रयाच्यत करे तथा श्रावक श्राविकाका करै आपवदानकरि प्रया  
 च्यत करे अर भक्तिपूर्वक युक्तिकरि देवका आज्ञा आहारदानकरि  
 प्रयाच्यत करे अर कर्मके उदयत दोष लगि गया हाय ताका  
 दारुना तथा श्रद्धानशू चलायमान भय गाय ताक सम्पददर्शन  
 ग्रहण करायना यथा जितेन्द्रके मार्गशू चलि गया होय ताक  
 मार्गमे स्थापन करना इत्यादिक उपकारकरि प्रयाच्यत है । उद्वरि  
 जो आचार्यादि गुरु शिष्यक श्रुतका अथ पटवै तथा नत मय-  
 मादिककी शुद्धिका उपदेश करे सो शिष्यका प्रयाच्यत है । अर  
 शिष्यक गुरुनिकी आज्ञा प्रमाण प्रवर्तना मुनिका चरणनिका  
 सेवन करे सो आचार्यका प्रयाच्यत है अरु अपना चरित्य रूप  
 आत्माक रागद्वेषादिक दापनिकि लिप्त नाहो होवे देना सो

अपने आत्माका वयोवृत्त्य है तथा अपने आत्माका भगवान्क  
 परमागमम लगाय बना तथा दशलगस्य वर्ममे लोन हाना तो  
 अत्यन्तयावृत्त्य है । तथा नाम आध लाभदिकके अर्थ अर  
 इन्द्रियनिक विनयनिक जावान नाहा हाना से। अपना आत्माका  
 वयोवृत्त्य है । बहुरि इ । जर हू विशेष जानना जा रागा मुनि  
 ता तथा गुरुनेका पात्र कान अर जवणने शयन आसन कमण्डलु  
 पाठा पुस्तक नेत्रनिद्र दधि मयूरपाच्छितरगत शाधना तथा  
 अवक्तरागा मुनिता जाडर औषवादि करि मयमके योग्य उप-  
 कार करना तथा शुद्ध ग्रन्थनिके वाचनेकरि धर्मका उपदेशकरि  
 परिणामद वर्मम लान करना तथा उठारना बैठारना मयमूर  
 करावना ककाठ लिखना इत्यादिककरि वयोवृत्त्य करै तथा कोऊ  
 मायु मार्गकरि खेदित हाय तथा भील म्नेष दुष्टराजा दुष्टतिर्य-  
 चनिकरि उपद्रवरूप हुआ हाय दुर्भिक्ष मारि व्याधि इत्यादिक  
 उपद्रवरुगि पाठा हानेत्त परिणाम जायर भया हाय तान् म्यान  
 न्य कुशल पाठकरि आदरकरि मिदन्तरे शिक्षाकरि स्थिति  
 करण करना सा दैयावृत्त्य है । बहुरि जा समर्थ हाय करेहू  
 अपना बलवार्थक दियाय पैयावृत्त्य नाही कर है से। धर्मरहित  
 हैं । तीर्थकरनिका जागामम करी श्रुतिकरि उपाश्या धर्मकी  
 निराधनाकरि आचार निगडया प्रभापना नष्ट करी वर्मात्माकी  
 जापदात्म उपकार नाडा किया तदि वर्ममे परामुत्त भया श्रुत  
 ती अज्ञा लाभनेत परमागमत परामुत्त भया जर जाके एसा  
 परिणाम होय जो जहा भेद अधिकरि दय हाता जगतमे एक

निम्नान् मुनि ज्ञानरूप अलगि मोक्षरूप अग्रिक पुत्राय ज्ञानरूप  
 लक्षणक नर ह वन्य है, जे कामक मारि रागद्व पक्षा परिहार करि  
 इन्द्रियनिम्न जीत अत्माके हितमें उग्रमो भए है ये लोकोत्तर  
 गुणनिम्न वर है मेरे ऐसे गुणवन्तनिका चरणनिका ही शरण  
 छाट ऐसे गुणनिम्न परिगाम न्याद्वयन ही होय है अर जमे २  
 गुणनिम्न पारणाम राच है तैम २ श्रद्धान उर्ध है श्रद्धान नर तदि  
 धर्मम प्रीति उर्ध तदि धर्मके नायक अरहन्तादिक पच परमेष्ठानके  
 गुणनिम्न अनुरागरूप भक्ति उर्ध है उमीरु भक्ति होय है जो  
 मायाचार रहित मिथ्यज्ञान रहित भोगनिका नाडा रहित अर  
 केदवा ज्ञान निष्कम्प अचल ऐसी जित भक्ति जाय हाय ताके  
 मयारके परिग्रहणका भय नाहा रहै है ते। भक्ति ज्ञानमाकी  
 न्याद्वयन होय है। नरुरि १७ महाप्रताननरि युक्त अर ज्ञाय  
 नरि रहित रागद्व पक्षा जीवन्मुक्ता श्रुतज्ञानरूप स्वनिम्न निज्ञान  
 ऐसा पात्रक। लाम न्याद्वयन न्यागने होय है जो स्तनत्रयधारी  
 क। न्याद्वयन क्रिया में स्तनत्रयसू अस्त। जेह न्याय आपक अर  
 अन्यक मोक्षमार्गम श्रुता है। नरुरि न्याद्वयन अन्तर १ नरि-  
 र ग दोह। तपनिध प्रज्ञान र्मकी निर्वाण न श्रान कागण है जो  
 आचार्यका न्याद्वयन कोया सो ममस्त मवका म्भ र्मका न्याय  
 वृत्तय कोयो भगवानका आता पागे अ आपक अर परर मयम  
 की रता शुभध्यानका नृद अर इन्द्रियनिम्न निग्रह दिया।  
 स्तनायकी रक्षा अर उत्तिशारूप दान क्रिया निजिनिर्दिष्टगुण  
 प्रगट दिखाया जिनैन्दवर्मका गमायना करी वन ररचदना सुलभ



हैं रोगीकी टडलकरना दुर्लभ है रागाग टड्ड करानादुर्लभ है अन्त  
का औगुण टाकना गुण प्रकट करना टाकाना गुणनिरूप प्रमाण  
तीर्थकर नाम प्रकृतिका दध कर है या वैशाखृत्य जगतमें उनम  
ग्यो विनेन्द्रग गिरा है जा काऊ आयरु या मायु वैशाखृत्य  
रु है सो मयोत्कृष्ट निगणहू पाई है घटुरि जा अपना साम  
धर्मप्रमाण छ कायना आरतिनी रखावै माध्यात म साके समस्त  
पाणानिहा वैशाखृत्य हाय है एम वैशाखृत्य नाम नयमा भावना  
पणन करो ॥६॥

अर अहन्त भक्ति नाम दण्डमो भावना वर्णन कर है । जो  
मनचननाय करिने निन एसे हाय अहन्त सशकल स्मरण कर  
है सो अहन्त भक्ति है ।

भावार्थ—अहन्तमें गुणनिम अनुराग सो अहन्त भक्ति है  
जो पूर्वजन्ममे पांडुरागण भावना भाई है ता तीर्थकर होय  
अहन्त हाय है ताके ता पोंगुमारण नाम भावनात उपनाया  
अदभुतपुष्प ताक प्रभात गर्भम जायनेक छह महीने पहली इन्द्र  
को जहात कुवेर है सा बाह बायन लम्बो नयोजन चौडी रत्न  
मय नगरी रच है तिसके मध्य रात्राके रहनेका महलनिहा  
रणन अर नगराकी रचना अर नहं द्वार अर काट खाई पटकाटि  
ग्यादिक रत्नमद जा कुवेर रच है तानी मणिमा ता काऊ हजर  
निहानिहारि रणन करनेक समर्थनाही है तथा तीर्थकरनेक माता  
न। गर्भका साधना अर रचरदीपादिकम निगम करनेवाली

छप्पन कुमारिका देवी माताकी न ना प्रकारकी सेवा करनेमें  
 मायधान होय है अर गर्भके आनेके छह महीना पहली प्रभात  
 मध्याह्न अर अपराह्न एक एक कालमें आकाशमें रतननिकी वर्षा  
 कुन करै है जर गर्भमें आपत्तही इन्द्रादिक चारि निकायके  
 देवनिका आसन कपायमान होतते चारि प्रकारके देव आय  
 नगरकी प्रदक्षिणा देय मातापिताको पूजा मत्कारादिकरि अपने  
 स्थान जाय है अर भगवान तीर्थकर स्फाटिक मणिका पिठारा  
 समान मलादिरहित माताका गर्भमें तिष्ठै है जर कमलवासिनी  
 छह दूरी अर छप्पन रुचिकद्वीपमें रसनेगाली अर और अनेक  
 देवी माताकी सेवा करै है अर नवमहीना पूर्ण हातें उचित  
 जन्ममें जन्म होतेहो चारों निकायके देवनिका आसन कपाय-  
 मान होना अर वाटिनिका अरुस्मात् वाजनेतें जिनेन्द्रका जन्म  
 जानि उठा हर्षतें सौधर्म नामा इन्द्र लक्ष योजन प्रमाण ऐरावत  
 हस्ती उपरि चढि अपना सौधर्म स्वर्गका इरुतीसमां पटलमें  
 अठारना श्रणोपद्व नाम निमानतें असरयातइय जपने परिकरनि  
 करि सहित साठा नाराकोटि जातिका शदिननिकी मिष्टानि  
 अर अमरयात देवनिका जयजयकार शब्द जर अनेक ध्वजा अर  
 उत्सवमामग्री अर कोट्या अप्सरादिका नृप्यादिक उत्सव अर  
 कोट्या गधर्षदेवनिका गानेकरि सहित अमरयात योजन ऊचा  
 इहातें इन्द्रका रहनेका पटल और अमरयात योजन तीर्थरू दक्षि-  
 णादिशामें है तहाते जम्बूद्वीप पर्यन्त योजन उत्सव करते आय  
 नगरकी प्रदक्षिणा देय इन्द्राणी गमूतिरुहमें जाय माताका माया-

निद्राके चशिखरि पित्राग ७ पत्र भयते अपना नन्द्यशक्ति ताँ  
 बालक और रचि तार्वरम्भ गणी भक्तिन त्याग इन्द्रक ३११  
 है तिमालम दसता इन्द्र तपन कू नाग प्राप्त हाता हनार ३१  
 रचिखरि दसै है फिर तनी दशनादक स्वर्गानन्द इन्द्र ३२ भवन  
 घापी यत्तर ज्ञातिगानिक इन्द्राग्न अमर्य तडा अपना जदना  
 सेना घाटर परिवार सन्ति गात्र है । तदा मीमर्ष इन्द्र परावति  
 हस्तो ऊपरि चट्या भगवानर मादम लेय स्वर्ग तदा ईशानइन्द्र  
 छत्र धारण करे अर मनतामार मन्द चमर डारते अन्य  
 असम्यक्तदन अपने अपने लयगम माग्न न बटा उत्पत्ता  
 मेरुगिरिका पाटुकुवनम पाटुकशिलाउर्षा जन्मिम अहिमन है  
 तिमउपरि जिनेन्द्र पवराय अर पाटुकनर्त नार समुद्र पर्यन्त  
 दाऊ तरफ दवाँका पकति रना जाय है त। नीर समुद्र केगा  
 भूतित पाँचराड दशलाय मागुणचाम हनार योचन पर है  
 तिम अमरम मेरुपी च्छिगार्ति दाऊ तरफ मुख्य कुन्दल तार  
 क कणादि जटभुत रत्ननिक आभरण पद्म दानिरी पदति मेर  
 पी चूलिमात जोरममुद्र पर्यंत गणी रन्व है अर हाथ हाथ  
 रत्नश सौर्ष है तदा दाऊ तरफ इन्द्रक लडे रहनेक अत्र  
 दाय छोटे मिहानन ऊपरि दशान इन्द्र कलश लेय जमिपक एर  
 हनार आठ कलशनिकरि कर है तिन रन्धानका मुख एर  
 योचनका उदर छरिगानन चौडा गाठ याचन ऊचा ति  
 कलशनिते निरुमि धारा भगवानक वनमय शरीर ऊपरि वृष्पनि  
 री वषा समान नावा नाहा करै अर पाछे इन्द्राणी कीमल

रश्मिर्त पूछ अपना जन्मक कृतार्थ माता की रश्मिर्त व्यापे  
 रातमय ममम्न आभरण रश्मि पहरार्थ इ तदा अनेक देव अनेक  
 उत्तम रिश्तर्त तिनक लिखनेक कोऊ ममर्थ नाहीं फिर मेरु  
 गिरित पूर्यत् उत्तम करते तिनैन्तु कृत व्याप ममर्ण करि इन्द्र  
 राहा ताडयनुन्यादिक जा उत्तम कर है तिन ममम्न उत्तमनिर्क  
 काऊ अमर्ण्यतकाल पर्यन्त काटि जिद्वानिपरि वर्णन करनेक  
 ममर्थ नाहा है । जिनन्द जन्मर्त हा तीर्थकर प्रकृतिके  
 उत्तमके प्रभावर्त दश अतिशय जन्मर्त लिय ही उपर्ज है  
 पमरहित शगर होय, मलमय रक्षादिक रहितपना, अर  
 मरारमे दुःखर्ण कविर समचतुरन्तान्स्थान, यूपभनाराचम-  
 जडभुत अप्रमाणरूप, महामुग्ग शरार अप्रमाणरूप एक हजार  
 आठ लक्षण, प्रियहितमवुरचन ये मनस्त पूरजन्ममे पौडश  
 काण भावना भाई ताका पभावम नहुरि इन्द्र अगुठमे स्थाप्या  
 अमृत ताक पान करता माताका स्तनत उपज्या दुग्धपाद  
 नाहा करे है फिर अपनी अमर्ण्य समान रने देवकुमारनिर्मे  
 काडा करने वृद्धिक प्राप्त हाय है अर स्वर्गलोकर्त आभरण  
 वस्त्र भोजनादिक मनराहित देव लीये पामता गरिदिन हाजिर  
 रहै है पृथ्वीलोक का भोजन आभरण रस्त्रादिक नाही अङ्गीकार  
 करे है रश्मिर्त आवे ही भोगे है । नहुरि कुमारकाल व्यतीत  
 करि इन्द्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साह करि भक्तिपूर्णक  
 पिताकरि समर्पण कीया राज्य भोगि जमर पाय ममार देह  
 भोगनिते विरागता उपर्ज नदि अनित्यादिक गारह भावना भावने

हीते लोकातिक्रमेण जाय रन्दना स्वरूप मयाधनादिक करे है  
 अर जिनेन्द्रक प्रिराग भाग हातेही चारिनिकायके इन्द्रादिकृत्य  
 अपने आमन सम्पायमान होनेत जिनेन्द्रके तपका अमर अमि  
 ज्ञानतें जानि बडे उत्सर्गते जाय अभिषङ्करि दण्डलाङ्के रक्षा  
 भरणतें भक्तिते भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेन्द्रक  
 चढाय अप्रमाण उत्सव अर जय जयकार शब्दनहित तपके योग्य  
 रत्नम जाय उत्तर तहा वस्त्र आभरण ममस्त त्याग देव अधर  
 झेलि मस्तक चढाय अर पचमुष्टा लाच मिद्वनिक नमस्कारकर  
 कर तदि कैशनिह मर। उत्तम जानि इन्द्र रत्ननिके पात्रम  
 धारणकरि क्षीरसमुद्रमै उडो भक्तिते खेप है जिनेन्द्र कनेक कालम  
 तपके प्रभावतें 'गुरुल'यानके प्रभावतें अरु श्रणात्र घातिया  
 कर्मनिका नाशकरि कैशज्ञानक उत्पन्नकरे हैं तदि अरहन्त नन्व  
 प्रगट होय है तदि कैशज्ञानरूप नेत्र रि भूत भविष्यतें वर्तमान  
 त्रिशालवर्ती ममस्त न्ययनिकी अनन्तात परणतिमहित अनु  
 रमतेँ एक समयम युगपत ममस्तक जान हैं दर्श है । तदि  
 च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणकी पूजा स्वरूप करि भगवानरा  
 उपदेशके जमि ममस्मरण अनेक रत्नमय रचें हैं तिस ममस्मरण  
 की निभूतिरा वणन कौनकर सकै ? शृंगीते पाँच हजार घनुर  
 उवाचाके नीम हजार पैनी ताउपरि इन्द्र नोलमणिमय गोल  
 भूमि चारह योचन प्रमाण निमऊपरि अप्रमाणमहिमासहित सम  
 स्मरण रचता है जग ममस्मरण रचना होय है अर भगवानरा  
 विहार होय है तहाँ जाघेनिकु दीरानेगमी जाय बहरे श्रवण

करने लगि जाय लूले चालने लगि जाय है गूगे बोलने लगि जाय है वांतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तम अर जलकी खातिका अर पुष्पगोडी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाखशाला उपवन वेदी भूमि फिर काट फिर कल्पवृक्षनिका वन रत्नमयस्तूप फिर महलनिकी भूमि फिर स्फटिकका काटमें देवच्छद नाम एक योनिनका मण्डप सब तरफ द्वादश मभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी गंधकुटीमें विहासन ऊपरि च्यारि अगुल अन्तरीक्ष विराजमान भगवान अरहन्त है जिनकी अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तमोक्ष अनन्त सुखमयी अन्तरङ्ग विभूतिकी महिमा कहनेहू च्यारिज्ञानके धारक गणवर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सक अर समयसरण की विभूतिही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी ऊपरि है तहा चउसठि चमर बत्तीस युगलदेवनिके मुकुट कुण्डल हार कडा भुजगधादिक ममस्त आभरण पहिरे ढालि रहै है तीन छत्र अद्भुत कातिके धारक जिनकी कातिके सूर्य चन्द्रमा मन्द ज्योतिर्भाम है अर जिनकी देहका प्रभामण्डलको चक्रबन्ध रक्षा जाकरि समयसरणमें रात्रिदिनको भेद नाहीं रहै सदा दिवस ही प्रवर्त है अर महामुग्ध त्रैलोक्यमें ऐसा मुग्ध और नोही ऐसी गंधकूटि ॥ ऊपरि देवनिकरि रन्या अशोकवृक्षक देखतेही समस्त लोकनिका शोकनष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी बषा आकशत होय है अर आकाशमें साढारार कोटि जातिके चादिरनिकी ऐसी मधुर घनि होय है जिनके श्रवणमात्रत क्षुवा

हीते लोकातिरिक्त आय मन्दना स्तवनरूप मयोधनादिक कर है  
 अर जिनेन्द्रक मिराग भाग हातेही चारिनिशायक इन्द्रादिकरूप  
 अने आमन कम्पायमान होतेतैं जिनेन्द्रके तपका अमर अवि  
 ज्ञानतैं जानि बडे उत्पन्नतैं जाय अभिपत्करि देवमकरैं मन्त्रा  
 भरणत भक्तित भूषितकरि रामयी पालकी रचि जिनेन्द्र  
 चढाय अप्रमाण उत्पन्न अर जय जयकार शब्दनहित तपके योग्य  
 वनम जाय उत्तार तहा वस्त आमरण ममस्त त्याग देव अघर  
 झेलि मस्तक चढात अर पचगुष्टा लेच मिद्वनिक नमस्कारकर  
 कर तदि केशनिह महा उत्तम जानि इन्द्र रत्ननिके पायमे  
 धारणकरि क्षीरसमुद्रमें बजी भक्तिरें लेप है जिनेन्द्र कोर कालम  
 तपके प्रभाततें शुरुअभ्यासके प्रभाततें अरु अंगामें यातिगा  
 कर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानक उत्पन्नतैं हैं तदि अरहन्त नन  
 प्रगट होय है तदि केवलज्ञानरूप नेर रि भूत भविष्यत वर्तमान  
 त्रिकालतीन ममस्त रूषनिकी अनन्तात परणतिमहित अनु  
 त्तमतेँ एक समयमें युगपत समस्तह जानि हैं दर्श है । तदि  
 चारिनिशायके देव ज्ञानरन्त्याणकी पूजा स्तवन करि भगवानका  
 उपदेशके जवि समप्रमरण अनेक रत्नमय रत्न हैं तिम समप्रमरण  
 की विभूतिकी वर्णन नौनकर मकै ? कृ गीते पाँच हजार धनुष  
 ऊ चाचाके तीन हजार पैठी ताठपरि इन्द्र नालमणिमय गोल  
 भूमि वासह यावन प्रमाण निचउपरि अप्रमाणबहिमामहित सम  
 प्रमरण रगता है जहा समप्रमरण रचना होय है अर भगवानका  
 निहार होय है तहाँ आघेनिह दीपनेगी जाय बहरे श्रवण

होय है । आर्द्रमागेवी भाषा समस्त जनसमूहय मैत्रीमान,  
 समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिक सहित नृक्ष होय है पृथ्वी  
 दर्पन समान रत्नमयी तृण फटकर रज रहित होय है, शीतल  
 मन्द सुगन्ध पवन चलै है, समस्त जनाके आनन्द प्रगट होय  
 है, अनुमूल पवन सुगन्ध जलकी वृष्टिकरि भूमि रश्मि रहित  
 होय है चरण पर तहा सात अंगे सात पाछे एक धीच एस  
 पन्दराकरि दोयर्म पचीस कमल देव रचे हैं, आकाश निर्मल-  
 दिशा निर्मलि न्यागनिकायके देवनिकरि जयजय शब्द  
 एक हजार आगरिकरिमहित किरणनिका धारक जपना उद्योकरि  
 सूर्यमटलकू तिग्गकार करता वर्षश्चक्र आगे चालै  
 अष्ट मङ्गलद्रव्य ये चाँदह देवकृत अतिशय प्रगट होय है । क्षुधा  
 तृषा जन्म जरा मरण रोग शाक भय विस्मय राग द्वेष मोह  
 अरति चिन्ता स्वेद खेद मद निद्रा इन जष्टादशदोषनिकरि रहित  
 अरहत तिनके प्रदना स्तवन ध्यान करे । या अर्हतभक्ति समार  
 समुद्रका तारनेवाला निरतर चिन्तन करा । सुखका करनेवाला  
 अर्हत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो जनत नाम  
 है । जर भक्तिका भस्त्रा इन्द्र भगवानका एक हजार जाठ नाम-  
 करि स्तवन किया है जर जे अल्पसामर्थ्यके चारक है ते हू  
 अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहत-  
 भक्ति समार समुद्रका तारनेवाली है सम्पद्दशेनर्म अरहतभक्ति  
 में नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है । अरहतभक्ति नरकादिग-  
 तिक हरनेवाली है या भक्तिको पूजन स्तवनकरि अर्थ उतार



तप्यादिक समस्त रोग वेदना नष्ट होय नाय है अर रत्नजडित  
 मिहामन सूर्यको कातिकृ जितै है । तद्विर निनेन्त्री दिव्य  
 धनिकी अद्वुत महिमा त्रैलोक्यपती जीवनिक परम उपकार  
 करनेवाली मात्र अन्धकारका नाश करै है अर समस्तजीव अपनी  
 अपना भाषामें शुद्ध अर्थ ग्रहण करै हैं अर समस्त जीविके  
 मशय नाहीं रहै हैं स्वर्गमोक्षका मार्गक प्रगट करै हैं दिव्यधनि  
 महिमा वचनद्वारा गणधर इन्द्रादिक रुढ़नेह समर्थ नाहीं है  
 जिनके समग्रमरणम जातिनिराधा जीवनिक वर निरोध नाहीं रहै  
 है समग्रमरणम मिह अर गन, व्याघ्र अर गौमचारी अर हन  
 इत्यादिक जातिनिराधा जीव बरबुद्धि छाडि परस्पर मित्रताह  
 प्राप्त हाय हैं । घोररागताकी अद्वुत महिमा है चिन्के  
 असंख्यात देव जय जयकार शब्द कहै हैं बिनके निरुद्धाह पाय  
 करिक दवनिकरि रचे उलस झाटा, दर्यग धरना, ठौणा छत्र,  
 चमर, धोतना य अचेतन दाय दू लोकमें मंगलताह प्राप्त हाय  
 है । अर कमल ज्ञान उत्पन्न भये पाठे दश अतिशय प्रगट  
 होय है चारा तरफ मी मो योजना सुमिन्नता अर, आकाश  
 गमन भूमिना स्पर्श नाहीं करै, अर काऊ प्राणाका ग्रह  
 नाहीं हाय और भोजनका अभाव अर उपसर्गका जभार,  
 चतुर्मुख दीप्ति, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छाया रहितपना  
 अर नेत्र टिमकारै नाहो, अर केश नाय बर्ध नाहीं ये दश  
 अतिशय धातिया कर्मका नाशतैं स्वय प्रगट हाय हैं । और  
 तीर्थकर प्रकृतिमा प्रभावतैं चौदह अतिशय दवनिकरि क्रिये

होय है । आर्द्धमागेवी भाषा समस्त जनसमूहमें मैत्रीभाव,  
 समस्त द्रुतके फूल फल पत्रादिक सहित नृक्ष होय है पृथ्वी  
 दर्पण समान रत्नमयी तृण ऋतकरज रहित होय है, शीतल  
 मन्द सुगन्ध पवन चलै है, समस्त जनाके आनन्द प्रगट होय  
 है, अनुमूल पवन सुगन्ध जलकी वृष्टिकरि भूमि रथ रहित  
 होय है चरण वरै तथा मात अगे मात पाछे एक बीच एस  
 पन्दराकरि दोयमें पञ्चीस कमल देव रचे है, आकाश निर्मल-  
 दिशा निर्मलि व्यापनिकायके देवनिकरि जयजय शब्द  
 एक हजार आराकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योकरि  
 सूर्यमण्डलकू तिग्स्कार करता धर्मचक्र आगे चालै  
 अष्ट मङ्गलद्रव्य ये चाण्डह देवकृत अतिशय प्रगट होय है । भुधा  
 तृपा जन्म जरा मरण रोग शाक भय विस्मय राग डोष मोह  
 अरति चिन्ता स्नेह खेद मद्र निद्रा इन अष्टादशदोषनिकरि रहित  
 अरहत तिनके पदन। स्तवन ध्यान करो । या अर्हतभक्ति मसार  
 समुद्रका तारनेवाली निरत चिन्तन करा । सुखका करनेवाला  
 अर्हत ताका स्तवन करो याका गुणनिके जात्रय ते। जनत नाम  
 है । अर भक्तिका भय। इन्द्र भगवानका एक हजार आठ नाम-  
 करि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक है ते हू  
 अपनी शक्तिप्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहत-  
 भक्ति ममार समुद्रका तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमें अरहतभक्ति  
 में नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है । अरहतभक्ति नरकादिग-  
 तिक हरनेवाली है या भक्तिके पूजन स्तवनकरि अर्थ

कै है सो देनोंका मुख फिर मनुष्यका मुख भोगि अग्निाशी  
 मुखका धारक अक्षय अग्निाशी मुखक प्रोप्त होय है, एम  
 अहंतभक्ति नाम दशमो भोजना वर्णन करी ॥ १० ॥ अर  
 आचार्य भक्ति नाम ग्यारमा भोजना वर्णन करै है । सो हा  
 गुरु भक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतराग गुरुनिके  
 गुणनिमे अनुराग होय है धन्य पुरुषनिके मस्तक ऊपरि गुरुनि  
 को जाना प्रार्त है आचार्य हैं सो अनेक गुणनिको रानि हैं  
 श्रेष्ठताका धारक हैं यात इनका गुण मनविषै धारणकरि पूजिए  
 अर्घ उतारण करिये पुष्पाचलि अग्रभागमें क्षेपिये जो मेर ऐसे  
 गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहू कैसेक है आचार्य जिनके  
 अनगनादिक बारह प्रकारका उज्ज्वल तपनिमें निरंतर उद्यमहै  
 अर उह आश्चर्यकरियाम साधन है अर पचाचारके धारक है  
 अर दशलक्षणधमरूप है परणित जिनकी और मनश्चनकायका  
 गुप्तकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय है  
 अर मम्यदर्शनाचारक निर्दाष धारे हैं और मम्यज्ञानका शुद्धता  
 कि युक्त है अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धताके धारक अर  
 तपश्चरणमे उमाहयुक्ति अर अपने वीर्यरू नाही छिपावतें वाईम-  
 परिपहनिके जीतनेमे समर्थ ऐसे निरंतर पंच आचारके धारक हैं  
 जन्तर ग बहिरङ्ग ग्रन्थकरि रहित निग्रथ मार्गके गमन करनेमे  
 तत्पर हैं अर उपनाम बेला तैला पचोपनाम पक्षापवाम मात्ताप-  
 वाम करनेमे तपिर हैं अर निजेनमनमे अर परतनिके दराडे अर  
 आनिके स्थानमे निश्चल शुभध्यानमे निरन्तर मनकू धारे हैं

अर शिष्यनिकी योग्यताकू आछी रीतिस् जानि दीक्षा देनेमें  
अर शोधा करनेमें तिपुण हैं अर युक्तिते नर प्रका नयके  
जाननेवाले हैं अर अपने कायस् ममत्व छाडि रात्रिदिन तिष्ठै  
हैं समारूपमें पतन हो जानेकें भयमान हैं मनचनकायको शुद्ध-  
तायुक्त नामिकाके अग्रमें स्थापित करिने है नेत्रयुगल जिन्होंने  
ऐसे आचार्यनिकू समस्त जगनिकू नमाय पृथ्वीमें मस्तरुधरि  
चन्दना करिने है तिन आचार्यनिका चरणनिकरि स्पर्शन भई परि-  
त्रजकू अष्टद्वयनिकरि पूजिये सो समार परिभ्रमणका क्लेश  
पोडान् नष्ट करनेवाली आचार्य भक्ति है अर यहा ऐमा  
प्रियेन ज्ञानना जो आचार्य है सो समस्त धर्मके नायक है आचा-  
यनिके आधार समस्त धर्मके नायक है आचार्यनिके आधार  
समस्त धर्म हैं यात एते गुणनिके धारक हो आचार्य होय उडा  
राजानिका वा राजाके मन्त्रोनिका वा महानगश्रेष्ठीनिका कुलमें  
उपज्या होय अर जाके स्वरूपकू देखते हो शातपरिणाम हो जाय  
ऐमा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआनार जगतमें  
प्रसिद्ध हाय पूर्ण गृहचारामे भा कड़े हाणआचार निन्द्यन्यनार  
नाडी किया होय अर उत्तमान भोगमम्पदा छाडि निरक्तताङ्  
प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यनहार अर परमार्थके ज्ञाता हाय  
अर बुद्धिको प्रगुता अर तपको प्रगुताका धारक होय अर मन  
के अन्य मुतीझरानेतें ऐसा तप नाहीं बनि सकै तैमा तपका  
धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय उहुत काल गुरुनिका  
चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका

वचन श्रवण करतें ही वर्मम दृढता अर सक्षयका अमार अर  
 उमार देहभोगनिर्त प्रिरागता जाऊं निगल हाय भिद्वान्तधुके  
 र्थका परगामो इन्द्रनिका दमनकरि इत्येक परलोभमन्धी  
 भे। पत्रिलामरहित दहादिकम निर्ममपि हाय महा गीर होय उप-  
 नगपरापटनिका फदाचिन् जाका चित्त चलायमान नहीं हाय आ-  
 नाचार ही चलि जाय तो सकलमघ प्रष्ट है जाय 'वर्मका लोप  
 १। जाय स्वमत परमतका नाता होय अनेकसां विधार्म क्रीडा  
 फग्नगाला हाय अन्यके प्रभादिरत रायगताहिन तत्काल  
 उत्तर देनेगाला हाय एसांतपक्ष सण्डनरि मत्यार्थधर्म  
 स्थापन करनेका जाका मान्य होय वर्मका प्रभावना करनेम  
 उपमा हाय गुणनिके निरुद प्रयश्चित्तादरमत्र पंडि छत्तास  
 गुणनिका धारक होय है मो समस्त सवर्क नास्थिगु गुणनिकरि  
 रदया जाचार पद प्राप्त होय एते गुणनिका धारक हाय तिमही-  
 — जाचार्यपना होय है ऐम गुणनि रिना आचार्य हाय तो वर्म  
 तार्थका लोप हा जाय जमलोकी प्रवृत्ति हा जाय ममममच  
 न्यन्डाचारी हा जाय खुरसी पणिपाटो जग आचारकी पणिपाटी  
 २। जाय । वदुरि आचार्यपनाक अन्य अष्ट गुण हैं तिनका  
 तारक हाय । आचार्यगान, आधारगान, पयदरगान, प्रकृता  
 १५ वापायनिदर्शक, अरपोडक, अपरथायी, निर्यापक ॥ आठ  
 गुण हैं । तिनम पच प्रकारका आचार वारण करै ताक आचार-  
 वान रहिये है जीयादिस्तन्य भगवान मर्यज्ञ वीतराग दिव्य  
 निराभरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखि कथा तिनमे श्रद्धानरूप परणति

सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकृ निर्माध आगम अर ओत्मानुभव  
 करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पच पापनिका  
 अमारूप प्रवृत्ति सो चारित्रिचार है अन्तरंग तम प्रवृत्ति सो  
 तनाचार है परीषदादिक आए अपनी अक्तिरू नाही छिगय  
 भोरतारूप प्रवृत्ति सो गोर्याचार है यथा औरहू दश प्रकार स्थित  
 कल्यादिक आचारम तथा समितिगुण्यादिकनिका कथन करिये  
 तो उक्त कथन अधि जाय । पचप्रकार आचार आप निषेध  
 आचार अर अन्य शिष्यादिकनिकृ आचरण करानेमें उद्यमी हाय  
 सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकृ शुद्धआचरण  
 नाहीं जगय मरु होणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण  
 चम्पिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपन आचरणीण होय  
 सो गुप्त उन्देश नाहीं करि मरु तात आचार्य आचारज्ञान ही  
 हाय ॥ १ ॥ उहुरि जाके विनेन्द्रका प्रख्यात्पार अनुयोगका  
 आचार हाय स्याद्वाङ्मन्याका पारगामी होय शब्दे विद्या न्याय-  
 निद्या निद्रातन्याका पारगामी होय प्रमाणनय निक्षेपणिकरि  
 स्यानुभव करि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो  
 आधारज्ञान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका  
 मशय तथा एकातरूप दृढ तथा मिथ्याचरणकू निराकरण नाहीं  
 करि मरु । उहुरि जनन्तानन्तरालमें परिभ्रमण करता ज वरु  
 प्रतिदुर्लभ मनुष्यवन्मरु पापना तामे हू उत्तमदश जाति कुल  
 इन्द्रियपूर्णता दायायु मत्तमगति श्रद्धनि ज्ञान आचरण ए उत्तरो-  
 चर दुर्लभ मयोग पाय तो जल्यज्ञानी गुरुके निकट चमनेराला

शिष्य से सत्यार्थ उपदेश नाहो पावनेतें यथार्थ आपका स्वरूप नाहो पाय मशयरूप हा जाय तथा मोक्षमार्गक अतिदूर अति रुठिन जानि रत्नत्रयमार्गसू जलि जाय तथा सत्यार्थ उपदेश बिना त्रिवयकशायनिमै उरझा मनकू निकामनेमै समर्थ नाहो होय तथा रोगकृत वेदनाम तथा घोर उपमर्गपरीपहनितें चलय हुन परिणामक श्रुतका अतिशयरूप उपदेशनिना थावनेकू समर्थ नाहो हाय है । बहुरि मरण आजाय तदि सन्यासका अगसरमै आहारपानका त्यागको यथा अगसर देशकाल सहाय सामर्थ्यका क्रमकू ममज्ञे निना शिष्यका परिणाम चलि जाय वा आर्त ध्यान हो जाय तो सुगति बिगाडि जाय धर्मका अपनाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममे शिथिल हो जाय तो बडा अनर्थ है तथा जो मनुष्य आहारमय है आहारत जोवें है आहारहीका निरन्तर घाछा करै है अर जब रोगके बशतें तथा त्याग करनेतें आहार छुटि जाय तदि दु खकरि ज्ञानचरित्रम शिथिल होय धर्मध्यान रहित हा जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि बुधावृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप तमृतकरि सीचा हुआ समस्त क्लेश रहित भया धर्मध्यानमै लीन हो जाय है बुधावृषारोगादिककी वेदना सहित शिष्यकू धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिष्यरूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुति का आधारनिना घम रहै नाहो तातें आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्त पाद मस्तकको दानना स्पर्शनादि करना

मिष्टान्नचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वे जे अनेक साधु घोरपरीषद सहकरि आत्मकल्याण क्रिया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहमें भिन्न आत्माका अनुभव करानेकरि वेदना रहित करै तथा मो मुने ! अब दुःखमें धैर्य धारण करो ससार में कौन कौन दुःख नाही भोग अर बोतरोगताका शरण ग्रहण करेगे तो दुःखनिका नाशकरि इत्याणक प्राप्त होवेगे इत्यादिक बहुत प्रकार कहि मार्गसू नाही चलने देन तातें आधारान गुरु-निहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥ बहुरि जो व्यग्रहार प्रायश्चित्त-सूत्रनिका ज्ञाता होय जातै प्रायश्चित्तसूत्र आचार्य होने योग्य होय तिसहोक् पढ़ावै है औरनिके पढ़ने योग्य नाही जे जिन-आगमका ज्ञाता अर महावैर्यमान प्रलज्जद्विका वारक होय सो प्रायश्चित्त देन अर द्रव्य क्षेत्र काल भाग क्रिया भाग परिणाम उत्पाद सहनन पर्याय जो दीक्षाका काल अर शास्त्रज्ञान पुरुषार्थादिक आठो रीति जाणि रागद्वेष रहित होय प्रायश्चित्त देन है ।

भानार्थ—जामें ऐसी प्रतीणता होय जो याकू ऐसा प्रायश्चित्त दिये याका परिणाम उज्ज्वल होगया अर दोषका अभाव होयगा व्रतनिमें दृढता होयगी ऐमा ज्ञाता होय जाके आहारकी योग्यताका ज्ञानहोय तथा यता क्षेत्रमें एमा प्रायश्चित्तका निर्वाह होयगा या या क्षेत्रमें निर्वाह नाही होयगा तथा इस क्षेत्रमें यात पित्त, कफ शीत उष्णताकी अधिकता है कि हीनता है कि मम-



कर्तृत्वगुण मुख्य है ममत्त्व मयका वैयाधृय करनेका जारा  
सामर्थ होय है कोउ हीनागरी तारु शुद्ध आचरण ग्रहण करगै  
काऊ सन्दनानी होय तिनहू ममज्ञाय चारित्र्यम टगारै कडनिरुं  
प्राश्रित दय शुद्ध कर काऊर धमापदय दय दृढ़ता कर ।  
धन्य है आचार्य निनके शरणा प्राप्त हो गया तिनहू माश्व  
मार्गमें लगाया उद्धार कर है यात आचार्यका प्रकृता नामा  
गुण प्रधान है ॥४॥ बहुति अपायापायनिर्द्वि नामा पापमो  
गुण है केऊ माधु धुया तथा रोग घेदनाररि पीडित हूआ  
क्लेशित परिणामरूप हो जाय तथा तीव्र रागद्वेषरूप हो जाय  
तथा लज्जाकरि भयकरि यथारत अल्पानना नाहीं करे तथा  
रत्नत्रयम उन्माद रहित हो जाय धर्मतें शिथिल हो जाय तारुं  
अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नमयी रक्षानिना  
प्रगट गुण दाप गेमा त्रिपात्रे जो रत्नत्रयका नाश होतें कन्या-  
यमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतें अरना नाश अर नरकादि  
वृगतिमें पतन मथात दिग्याय अर रत्नत्रयकी रक्षानि ममारतें  
उद्धार होय अनत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि माभ्यात दिराय  
देय गेमा उपदेशकरि साक्षात दिराय दय गेमा उपदेशका  
सामर्थ जाम् हाय सो अपयोपायनिर्द्वि नाम गुणका धारक  
आचार्य हाय है इहा उपदेश त्रिपात्र कथन बहुत हो जाय  
जातें नाहीं लिखा ॥५॥ अर अरपीडर नाम छत्रा गुण कहिये  
है काऊ मुनि रत्नत्रय धारण करके हू लज्जाकरि भयकरि अभि-  
मान गौरवादिहरि अपना आलोकना यथारत शुद्ध नाहीं कर तो

आचार्य ताकू स्नेहकी मरी कर्गनिबू मिष्ट अर हृदयमे प्रवेश  
 शिक्षा करे जो हे मुने ! बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकू माया  
 चार करि नष्ट मति करो माता पिता समान गुरुनिके निकट  
 अपने दोष प्रगट करनेमे कहा लज्जा है अर आत्मल्यके वारक  
 गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगट करि शिष्यका अर धर्मका अर-  
 चाद नाहीं करावै हैं ताते शल्य दूरकरि आलोचना करो जैसे  
 रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैम द्रव्य  
 क्षेत्र काठ भातक अनुसार प्रायश्चित्त तुमहू दिया जायगा तातें  
 भय त्यागि आलोचना निदोष करहु ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू  
 जा माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका वारक आचार्य शिष्यकी  
 शल्यकू जररीत निकामै जिनकाल आचार्य शिष्यकू देखते ही  
 + स्थाल स्थाया हुआ मामष्ट तत्काल उगलै है तथा जैसे महा  
 अचण्डतेजस्वी राजा अपराधकू पूछे तदि तत्काल सत्य कहताही  
 जण तैम शिष्यहू माया शल्यकू निकारै हैं अर मायाचार नाहीं  
 छाडै तो गुरु तिरस्कारके वचनहू कहै हैं हे मुने ! हमारे सधवै  
 रनरुमजाहु हमरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरा-  
 दिकका मैल धोया चाहेगा सो निर्मल जलके भरे मरोवरकू प्राप्त  
 होयगा जो अपना महान् रोगकू दूर किया चाहैगा सो पृथीण  
 चैद्यकू प्राप्त होयगा तैसे जो रत्नत्रयरूप परमधर्मका अतिचार  
 दूरकरि उज्जलता किया चाहैगा सो गुरुणिका आश्रय करेगा  
 तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धता करनेमे आदर नाही तातें ये सुनिपणा  
 अत धारण भग्न होय सुवादि परीषद महनेको पिटयनाकरि कहा

सत्य है मगर निर्नरा तो स्थायनिके जीतनेत है माया स्थाय  
 क ही त्याग नाही क्रिया यदि तत समय मौन धारण हुआ है  
 नम्रता अर परिपक्वमहत्ता मायाचारोका घृया है तिगच हू पग्रिग्रह  
 हित नय रहै ही है यात तुम दुरभव्य हो हमार चरने योग्य  
 नाही हो आर तुम्हार परिणाम म्मे है जो हमारा दोष पगट  
 होय ता हम निच होय जाय हमारा उच्चवणा घटिजाय मो  
 मानना बबर का कारण है म्ण तो म्मुति निदाम समानपरिणामी  
 होय है ऐसे गुरु कठोर नमन कहि बगै हू मायाचारादिना  
 अमार रगत क सा होय अपीडर जाचाग जो बल्यान हाय  
 उपमर्ग परिषय आवे कायर ताही होय पूतापमान ह य जाका  
 बचन बोऊ उल्लयन रगने ममर्ब नाही होय अ प्रभासना होय  
 जाय दलतपमाण दोषना वाग्य माध कापने लगि जाय चार  
 बडे बडे गिराक धारक नगीभूत होय बन्दना कर जाय  
 उज्ज्वलकीति गिर्यात होय जाय काति सुनताही जाय गुणिनि  
 दद गद्दाहो जाय जाका बरन जगतम दर्या गिनाही दूग्देशनिर्ग  
 प्रमाण करै मिहना ज्या निर्भय हाय ऐमो अपीडर गुणका  
 धारक गुरु हाय सो जमै शिष्यका हित हाय तस उपकार कर है  
 जमै बालरना हितने चिन्तन करतो माता रुदन ररताहू  
 बालकहू दारकरि मुख फाडि जगहीत घृत दुग्धादि पान करार  
 है । ऐसे शिष्यका हितहू चिन्तन करता आचार्य हू माया-  
 शत्यमहित क्षयरना बलात्कारकरि दोष दूर करे है अथना कटुक  
 औपधि ज्यो पदचात् हित कर है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर

शिष्यकू दोषों ही छुड़ाये सो गुरु मला नाही जर जो आचरण  
 करि छाडनाहूकरि दोषनिर्त निन्न करे हं सो गुरु पूजने योग्य  
 है तर्त अपपीडकगुणका धारक हा आचार्य होय है ॥ ६ ॥  
 जन अपरश्रायीगुणकू कहं है जो शिष्य गुरुनिकू दोष आलो-  
 चना कर सो दाप जन्यकू गुरु प्रकाज नाहों करे जस तत्ताय-  
 मान लेहकरि पीया जल सो राख प्रगट नाही होय तर्त शिष्य-  
 करि श्रवण क्रिया दाप आचार्य दू क्रिपीकू नाही जणार्त हं से-  
 ही अपरश्रायी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका भिन्नामकरक रूढ  
 अर गुरुजो शिष्यका दोष प्रगट करे जन्यकू जनार्त तो ना गुरु  
 नाही अधर्म है भिन्नामपाती है कोउ शिष्य अपना दोषकी  
 पगडता जानि दू गित होय जात्मघात करै है ना क्रोधी हाय  
 गनयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्यमयमै  
 नाय तथा जन हमाग अगता रुगे तर्त तुमागे हू अज्जा करैगा  
 ऐम समस्त मयम प्रोपणा प्रगट होय समस्तमंघ आचार्यनिका  
 पतोतिरहित हा जाय आचार्य मयके त्याज्य हो जाय इत्यादिक  
 बहुत कट कथनी नथि जाय तर्त अपरश्रायी गुणका धारक ही  
 आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अन आचार्य निर्यापक हाय जैसं  
 नायदू खेपटिया समस्त उपद्रवनिकू टालि नायकू पार उत्तारि  
 ले जाय तेसे आचार्य दू शिष्यकू अनेक विघ्नसू बचाय समा-  
 समुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐमे आचार्यान ॥ १ ॥  
 आधार्यान ॥ २ ॥ व्यवहार्यान ॥ ३ ॥ पूरुता ॥ ४ ॥ अपायो-  
 पायवदशों ॥ ५ ॥ अवपीटक ॥ ६ ॥ अपरश्रायी ॥ ७ ॥

निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यानि के अष्टगुणक धारक करतेनिके गुणनि में अनुरागसे आराग भक्ति है ऐमें आचार्यानि के गुणनिक स्मरण करके आचार्यानिका स्तवन बन्दना करता जो पुरुष अर्ध उत्तारण करै है सो पापरूप ममारका परिपाटीक नष्टकरि अक्षय सुखक प्राप्त होय है ऐस्य गीतराग गुरु कहै हैं । ऐसे आचारग भक्ति वर्णन करा ॥ ११ ॥ अत्र बहुश्रुतभक्ति नाम चागमी भावनाक कहै हैं । जो अगपूरादिकका ज्ञाता तथा न्यार अनुयोगनिका पारगामी जो निरन्तर आप परमात्मक पद अन्य शिष्यनिक पढावै बहुश्रुती है तथा तिनके श्रुतज्ञान हो दिव्य-नेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमें प्रवर्तते और अपने जिनसिद्धान्त अर अन्य एकातीनिके मिद्धान्तनिका विस्तारवै जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याक धारक तिनको जो भक्ति से बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेह समर्थ है जे निरन्तर श्रुतज्ञान का दान करै हैं ऐसे उपाध्याय तिनको भक्ति विनयकरि सहित करै हैं ते चारित्ररूप ममुद्रका पारगामी ढाय हैं जे अङ्गदूरक पूकीणक जिनेद्र बणन क्रिये तिन समस्त जिनागमक निरन्तर पढै पढावै ते बहुश्रुती हैं इहा प्रथम आचाराग तामै अठारह हजार पदनिमें मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूरकृतागका छत्तीस हजार पद हैं जिनमे विनेन्द्रके श्रुतके आधारन करनेके विनय क्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानागका व्याजिम हजार पद तिनमें पट्टव्यनिरा एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ ममया-याग एक लाख चौसठि हजार पदनिमें है तिनमें जावादिक

पदार्थनिका द्रव्यक्षेत्र काल सारके आश्रित समानता, वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रेक्षति अङ्गके दोयलक्ष अष्टाईस हजार पदनिमें जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठि हजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातधर्मकथागके पांचलक्ष छप्पन हजार पदनिमें गणधरनिकरि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादि कनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपामकाध्ययन, नाम अङ्गके ग्यारहलक्ष पत्तर, हजार पदनिमें आचक्रके, व्रत शील, आचार क्रियाका तथा याका मन्त्रिनिका उपदेशका, वर्णन है ॥ ७ ॥ अन्तकृतदशांगके तेईसलक्ष अष्टाईस हजार पदनिमें एक एक, तीर्थकरके तीर्थमें दश दश मुनीश्वर उपमग सहित निर्माण प्राप्त भये तिनका कथन है, ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके, बाणवै लक्ष, चौगलोम हजार पदनिमें एक एक तीर्थकरके तीर्थमें, दश दश मुनीश्वर महाभयकर-घोर उपमग सहित देवनिर्त, पूजापाय विजयादिक अनुत्तर, विमानमें, उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ अश्वत्थारूपा नाम, अगके बानवैलक्ष पाडस सहस्र पदनिमें नष्ट सुष्टि लाभ अलाम सुख दुःख, जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विषाकृष्णश्रांगके, एककोटि, चौरामीलक्ष पदनिमें कर्मनिका उदय उदार्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम वारमजगका पाच, भेद है परिकम, स्रव, प्रयमानुयोग, पूर्व, चलिता तिनमें, परिकर्मकाह, पाच भेद है तिनमें चन्द्रग्रहणिके छह लक्ष पांच हजार पदनिमें चन्द्रमाका आयु गति अर कलाको, क्षान्तिवृद्धि अर, देगीनिमव, परिभारादिकका वर्णन है ॥ १२ ॥ अर

सूर्यप्रज्ञप्तिके पाचलक्ष तीन हजार पदनिमित्त सूर्यका आयु गति विमर्शदिकका वर्णन है ॥ २ ॥ १ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीन लक्ष पचीस हजार पदनिमित्त जम्बूद्वीप सम्बन्धी क्षेत्र कुलोचल द्रव नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥ ३ ॥ द्वीपमागर्भज्ञप्तिके चार लक्ष छत्तीस हजार पदनिमित्त असख्यातद्वीप भूमद्रुनिका और मध्यलोकके जिनमरुमुनिका अरभनरासो व्यन्तर ज्योतिष्क देवनि के निगमनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ १ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासो लक्ष छपन हजार पदनिमित्त जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिक्रम कक्षा अथ दृष्टिवाद अगस्त्यजी मेद सूत्रके अट्ठासो लक्ष पदनिमित्त जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्त्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादिक एकान्तगादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ ६ ॥ १ बहुरि प्रथमानुयोग के पाच हजार पदनिमित्त त्रैलोक्य महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ७ ॥ १ अत्र दृष्ट्यद्वयका चतुर्थभेदमे चौदहपूर्व है तिनमें उत्पदपूर्व एक कोटि पदनिमित्त जीवादिक द्रव्यनिका उत्पदादि स्वामारका निरूपण है ॥ १ ॥ १ अग्रायणीपूर्वके छिनैकोटि पदनिमित्त द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्त्व नवपदार्थ पेटद्रव्य सातमें सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ १ शीघ्रानुगादिक सप्तलक्ष पदनिमित्त आत्मरीर्य परवीर्य कामरीर्य कालरीर्य भावभौर्य तपोरीर्यादि समस्त द्रव्यगुण पर्यायनिका रीर्यका निरूपण है ॥ ३ ॥ १ अस्तिनास्तिपूगाद नाम भूतके साठलक्ष पदनिमित्त जीवादिद्रव्यनिका स्वद्रव्यादिचतुष्टयकी अपेक्षा अस्ति और परद्रव्यादि

चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभगादिक तथा नित्य-  
 अनित्य एक अनेकादिकनिका त्रिंशत्परहित वर्णन है ॥ ४ ॥  
 ज्ञानप्राप्त पूर्वके एक कोटि कोटि पदनिर्मे मति श्रुत अविधि मन-  
 पर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमनि कुश्रुति त्रिभग ये तीन  
 अज्ञान इनका स्वरूप सरूपा नियमफलनिके आश्रय प्रमाणपना  
 अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्राप्तपूर्वके छह अधिक  
 एककोटि पदनिर्मे वचनगुप्ति अर वचन त सत्कारका कारण अर  
 द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुत अर प्रकार असत्य  
 अर दशस्कारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥ आत्मप्राप्तपूर्वके  
 छद्मीय कोटि पदनिर्मे अहंता जीव है कर्ता है भोक्ता है  
 प्राणी है पद्मल है वेद है पिण्ड है स्वयम्भू है शरीरो मान  
 उक्ता शक्त जतु मानो मायो त्रियोगी अमकुट क्षेत्रज्ञ इत्यादिक  
 स्वरूपका वर्णन है ॥ ७ ॥ कर्मप्राप्तपूर्वके एक कोटि अस्मी  
 लाख पदनिर्मे कर्मनिका बधुउदय उदीर्ण सत्त्व उद्वेग उद्वेग उद्वेग  
 मक्रमेणविधि निकाचितादि अस्थाय अर ईर्यापथ तपस्या अधः-  
 कर्मादिकेनिका वर्णन है ॥ ८ ॥ प्रारम्भपूर्वके चौरासीलक्ष  
 नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रकाल भावनिक आश्रय करि पुरुषनिका  
 महंनन अर बलाजिकनिके अनुसार प्रमाणिक काल वा अप्रमाणिक  
 काल लिये त्याग अर पापसहित वस्तुर्त निराला होना अर उप-  
 धामकी विधि अर उपरासकी भावना अर पचसमिति अर तीन  
 गुप्तिनिका वर्णन है ॥ ९ ॥ त्रिधानुवादके एक कोटि दशलक्ष पद-  
 निर्मे अगुष्टपूसेनादिल मातमै अल्पविद्या अर रोहिणी आदि पांच



स महाविद्यानिका स्वरूप, मामर्था अरु इनका, साधन मन्त्र, तन्त्र, पूजा विधानका अरु सिद्धमई तिनका फरका अरु अनन्तरि स्थिति, मोम अग स्वर, स्थान, लक्षण व्याजन उन्नये अष्टप्रकार विविचिज्ञानका वर्णन है ॥ १० ॥ कल्पणानुवादपूर्वके छत्तीसकोटि पदनिम तादृकर चक्रधर, उलदन, प्रातिपद, दयादिकनिका गर्भकन्याणादि महाउत्तरनिका अरु इन पदनिका कारण पांडश भावना, वा तपविशेष, आचरणादिकका अरु चन्द्रमा, सूर्य ग्रह, नक्षत्रनिका, गमन तथा ग्रन्थ शकुनादिकके फरका वर्णन है ॥ ११ ॥ प्राण-प्रसाद पूजाके तेरहकाटि पदनिम कायका चिन्तिमाका, अष्टाग आयुर्वेद, ज्ञा वेदाविद्या ताका, भूतकर्मका, अरु जागलिका, अरु इला, पिंगलादिक स्वासाच्छ्वासका अरु गतिके अनुसार, दशप्राणनिम, उपकारक अनुपकारक, द्रव्यनिका वर्णन है ॥ १२ ॥ क्रियाविशालके नवकाटि पदनिम संगीत शास्त्र, छन्द, अलङ्कार, वहस्तरि कुला, अरु स्वाक, चौसठिगुण अरु शिल्पादिज्ञान अरु चौदासो गमाधानानि त्रिधा अरु एकुमी आठ सम्प्रदर्शनादिक्रिया, अरु पचोस दयदनादिक निष्पत्तिमिच्छा क्रिया वर्णन है ॥ १३ ॥ तन्त्रात्मविदुमारकाके सद्धाराराकोटि पदनिम तैला-क्यका स्वरूप छत्रोम परिष्कर्म, अष्ट, त्रयहारि चरारि-बोज माधुका स्वरूप माधुगमनका कारण क्रिया अरु मोक्षमुक्तका वर्णन है ॥ १४ ॥ एते पित्र्याणवे तादि प चामरासु पांच पदनिमें चौदह पूर्ण वर्णन किया। अरु दृष्टादागको, पाचमा भेदि चूलिका, पांच प्रकार है- एक एक चूलिकाके दायाँ कोटि नरलक्ष

निम्नी हुईर दीय मै पद है तिनमें जलगतचूलिकामे जलका  
 स्तमन जलमें गमन अग्निका स्तमन भक्षण अग्निरूपरि आमन  
 अग्निमें प्रवेशनादिकका कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है  
 ॥ १ ॥ अर स्थलताचूलिकामे मेरु कुलाचलादिनिमें भूमिमें  
 प्रवेश करनेके अर शोभगमनके कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका  
 वर्णन है ॥ २ ॥ अर वायुगतचूलिकामे मायारूप इन्द्रजालादि  
 निक्रियाका मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिकका वर्णन है ॥ ३ ॥  
 आकाशगतचूलिकामे आकाशगमनका कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चर-  
 णादिकका वर्णन है ॥ ४ ॥ रूपगतचूलिकामे मिह, हस्तो, तुरग,  
 मनुष्य, वृक्ष, हरिण, शशा, प्लवि, व्याघ्रादिकके रूप पलटनेके  
 कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है तथा चित्राम माटी  
 पाषाण काष्ठादिक इनकाखोदना तथा धातुनाद, रमवाद, खान्य-  
 चादादिकका रचनाके अर्थ है ॥ ५ ॥ पञ्चचूलिकाके दशकोटि  
 गुणचामलाय उपासीमें हजार पद हैं इहा ऐसा जानना यमस्त  
 द्वादशांग एक घाटि एक ही प्रमाण अक्षर हैं । १८४४६७४४  
 ०७३७०६५५१६१५ एते अनुपमरुक्त अक्षर हैं एक बार आग  
 अक्षर दूसरा नाहो आग इनमें मठि मयोगा ताई अक्षर है अर  
 आगमम कथा ऐमा मध्यपदका प्रमाण सोलामी चौथीम साँहि  
 तीयामीलख मात हजार आठसँ अठामो १६३४८३०७८८८  
 अपुनरुक्त अक्षर हैं इन अक्षरनिका प्रमाणका भाग दोए एकमो  
 घाराकोटि तीयामीलख अठामन हजार पाचपदे आए तिनमें  
 ममस्त द्वादशांग है और अक्षर अक्षर आठकोटि एक लख

आठ हजार एकपौषचेतुरिआक रहे ८०१०८१७५ इनिप्रक्षरनिका  
 एक पत्र होय नाही तात इनकू अण्णाव्य कथा नित अक्षरनिका  
 सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक है सामायिक नाम प्रकीर्णकमें  
 मित्रात्तर कृपायादिकक वन्शका अभावरूप नाम स्थापना द्रव्य  
 क्षेत्रकाल भारके भेदते छइ भेदरूप सामायिकका वर्णन है ॥ १ ॥  
 कहुनि चौतीस अतिशय जटप्रातिहार्य परमौदारिक दिव्य देह  
 ममरशरण ममा धमोपदेशादिक तीर्थकरनिका भयत्प्रका प्रका-  
 शरूप स्तवन नाम प्रकीर्णक है ॥ २ ॥ एक तीर्थकरके आल-  
 म्बन रूप रत्नालय प्रतिमाका स्तवनरूप प्रकीर्णक है ॥ ३ ॥ बहुरि  
 पूरकृत प्रमादजनित दोषका निराकरणक अर्थि द्रव्यमिक रात्रिक  
 चतुर्मासिक, सात्रत्मरिक, ऐयापथिक, उच्चमार्थ ऐसे मत्त प्रकार  
 प्रतिक्रमका जाई वर्णन ऐसा प्रतिक्रमण नाम प्रकीर्णक है ॥ ४ ॥  
 बहुरि सम्पद्दर्शन ज्ञान चरित्र तप उपचार स्वरूप पंचप्रकार  
 विनयका वर्णनरूप विनय नाम प्रकीर्णक है ॥ ५ ॥ बहुरि नन-  
 दयतानिकी वन्दनाक अर्थि तीन प्रदक्षिणा चतु शिरागनी तीन  
 शुद्धता द्वादश आरत इत्यादिक नित्यनैमित्तिकक्रियाका जाई  
 वर्णन ऐसा कृतकर्म प्रकीर्णक है ॥ ६ ॥ बहुरि जाम माधुका  
 आचरक गाचर आहारका शुद्धताका वर्णनरूप दश दैकीलिका  
 प्रकीर्णक है ॥ ७ ॥ बहुरि चारप्रकार उपमर्ग तथा चाईसपरीष  
 हानिके सदनके विधान अर इनके फलका वर्णनरूप उत्तराध्ययन  
 प्रकीर्णक है ॥ ८ ॥ बहुरि साधके योग्य आचारणका विधान  
 अथगसे बनका प्र्याश्चित्तका वर्णनरूप, व्यग्रहार नाम प्रकीर्णक

है ॥ ६ ॥ बहुत्रि द्रव्य क्षेत्र काल भागके आश्रय साधक ये योग्य  
 हैं ये अयोग्य हैं ऐसा विभागका वर्णनरूप कल्पाकल्प नाम प्रकी-  
 र्णक है ॥ १० ॥ बहुत्रि उत्कृष्ट सहननादिसमुक्त-द्रव्य क्षेत्रकाल  
 भागके प्रभापत उत्कृष्टर्याकरि वर्तते ऐसे जिनरूपो साधुनिके  
 योग्य त्रिकालयोगादि आचरणका अर स्थविर कल्पनिका दीक्षा  
 शिक्षा गण पोषणा आत्मप्रकार सल्लेखना अर उत्कृष्टस्थानगत  
 उत्कृष्ट आराधनाका वर्णनरूप महाकल्प नाम प्रकीर्ण है ॥ ११ ॥  
 जामें भजन व्यन्तर ज्योतिष्क तथा कल्परासीनिके प्रमाननिमें  
 उत्पत्तिका कारण दान पूजा तपश्चरण अकामनिर्जरा सम्यग्द्वय  
 सयमादिकका विधान तिनके उगजानेका स्थान वैभवका वर्णरूप  
 पुडरिक नाम प्रकीर्णक है ॥ १२ ॥ बहुत्रि मइद्विक देवनिमे इन  
 पुतीन्द्रादिकनिमे उत्पत्तिका कारण तपोविशेषादिक आचरणका  
 कहनेवाला महापुडरीक प्रकीर्णक है ॥ १३ ॥ जामे प्रमादसू  
 उपज्या दोषनिक त्यागतस्वरूप निषिद्धका प्रकीर्णक है ॥ १४ ॥  
 जैसे द्वादशांगरूप सूत्रका ज्ञान है सो तबका प्रभापत उपजे है सो  
 आप पढ़े हैं अन्यको शिक्षा बुद्धिप्रमाण शिष्यनिक पढ़ाये है  
 तिन बहुत्रुतनिका भक्ति है साहू बहुत्रुतभक्ति है जो गुणनिमे  
 अनुराग करना ताकू भक्ति कहिये है जा शास्त्रनिमे अनुरागकरि  
 पढ़े तथा-शास्त्रके अर्थक-अन्यकू कहे-जो धनकू लगाय शास्त्र  
 निका लिखायै तथा अपने हस्करि, शास्त्र लिखे तथा हीन अधि-  
 कअभरकू, मोत्राकाकू शोधन करै तथा पढ़नेवालेनिकू शास्त्र  
 लिखाय देवै, तथा व्याख्या कहे पढ़ावने, बचावने वालेनिकी

'आनाचिन्तोकी' स्थिरताकरि शास्त्रनिके ज्ञानाभ्यासों पूर्वतन  
 करी। साध्याये करनेक अर्थ निगदुल स्थान दबै सो नानाकरण  
 कर्मक नाश करनेवाली बहुश्रुतिभक्ति है। गुरि बहुमूल्य दस्त  
 निमै पृष्ठा लगाय पट्टमह डोरि करि साधनिक बाधै जो दस्तने  
 श्रम पेटन करनेवालेनिका मनहुँ राजायमान करै सो समस्त गुरु  
 श्रुतिभक्ति है। गुरि सुवर्ण करिमनाहर घड भये अर पचपूकार  
 रत्ननिकरि जटित मकडा पुष्पनिकरि गुरको मारभूत पूजा करै  
 मा श्रुतिभक्ति सशयदिक रहित सम्यग्ज्ञान उपजाय। अनुग्रमतै  
 केवलज्ञान उपनाम है जोपुरुष अपने मनहुँ इन्द्रयनिके विषयनितै  
 शक्ति अर शरभ्यारि श्रुतदेवताका गुण स्मरण करके 'भलीधिधीधै'  
 'वनाया पवित्र धर्म' श्रुतवताका उतारे हैं सो समस्त श्रुतका  
 पारगामी होय केवलज्ञान उपजाय निर्गणकू पोस्त होय है  
 ऐसे गुरुश्रुतिभक्ति नाम शरमी भावना वर्णन करी सो निरन्तर  
 भारो ॥ ४२ ॥ 'अं प्रवचनभक्ति नाम तेरमी भावनाकू वर्णन  
 कर है। प्रवचन नाम जिनेन्द्र सग्न धोतरागरि प्ररूपण रिया  
 आगमैका है। जिममें पटद्रव्यनिका पचस्तिरुपायका सप्ततत्वनिका  
 नवपदार्थनिका वर्णन है अर कर्मनिको प्रकृतीनिका नाश करने  
 का वर्णन सो आगम है जाका प्रदेश बहुत होय ताकी अस्ति-  
 काय सहा है। अर गुणपर्यायनिकू निरन्तर प्राप्त होय तातै  
 द्रव्यमैका है वस्तुपनाकरि निश्चय करिये तातै पदार्थ सहा है  
 स्वभावरूपनार्ति तत्त्वज्ञ है सो इनकी विशेष कथनी आगे  
 प्रकरण पाय कहती। जैसे अन्धकारसेयुक्त मङ्गलमें दीपक हस्तमें

लेखरि मेमस्तपदार्थ' देखिये है तमैं प्र'लोख्यरूप मन्दिरमें पवंचन-  
रूप दीपकरि मूक्षम' इथूल मूर्तीक' अमूर्तीक' पदार्थ' देखिये है ।  
प्रवचनरूप ही 'नेत्रानकरि' मुनीश्वर' चेतनादि गुणनिके धारक  
समस्तद्रव्यनिका अलोकन कर जिनैन्द्रके परमाणुक योग्यकाल  
में बहुत विनयपे पडिये सो प्रवचनभक्ति है कैमाक है प्रवचनजामे  
'पद्द्रव्य सप्तत्व' नपदार्थनिका भेद' समस्तगुणपर्यायनिका वर्णनहै  
'जामैं भूतकाल अनन्त भया और भविष्यत' अनन्त होयगा और  
'उत्तमान' तिनका 'स्वरूप' वर्ण है । जामैं अधोलोककी सप्तपृथ्वीअर  
'नारकोनिका' उसनेका उत्पत्ति होनेका स्थ ननिक्क' अर आयु' काय  
'वेदना' इत्यादिक ममस्तका अर भयनरामी देवनिका 'सातकरोड  
'पहत्तरलाख' भवनिका अर तिनका आयु काय विभव' प्रक्रिया  
'भोगादिकनिका' अधोलोकमे वर्णन किया है । जामैं 'मध्यलोक'  
'सर्वस्त्री' असंख्योत दीप समुद्रनिका अर तिनमें मेरु कुलाचल नदी  
'द्रवादिनिका' अर 'कर्म' भूमिके विदेहादिक क्षेत्रनिका अर भोग-  
'भूमिका' अर 'छिन' अन्तर्दीप मन्वन्धी मनुष्यनिका अर 'कर्म'  
'भूमिके' भोगभूमिके मनुष्यनिका कर्तव्यका और आयु काय सुख  
'दुःखादिनिका' अर तिर्यचनिका व्यन्तरनिके निराम विमर्ष पर-  
'धार आयु काय सौमन्य' प्रक्रियाका वर्णन है । तथा 'मध्यलोक' में  
'ज्योतिष्कदेव' है तिनके विमान विभव' परिहार आयु कायादिक  
'का' तथा सूर्य चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रनिका व्याख्यानगत सयोगादिक का  
वर्णन है । तथा 'उच्चलोक' में सठपटलनिका 'स्वर्ग' के अशमिन्द्रकेपटल

निका इन्द्रादिक दैवनिका त्रिमय परिवार आयु, काय, शक्ति गति सुखादिकका वर्णन है। ऐसे मर्मज्ञ करि प्रत्यक्ष देखा त्रिलोकमूर्ति ममस्त द्रव्यनिके उत्साह व्यय धीव्यवसा ममस्त प्रवचनमै वर्णन आगममै ह रहुरि कर्मनिको प्रकृतिनिका बन्ना होनेका उदयका सत्ताका मक्रमण दिखनिका ममस्त वर्णन, आगमनमै है। रहुरि ममास्त उद्धार कानेगला रत्नत्रयका स्वरूप प्राप्त होनेका उपाय परमागममम रहुरि गृह्यपणाम श्रावक धर्मका जगन्म मध्यम उत्कृष्ट चर्चाकार। तथा श्रावकनिके त्रत मयमादिक कृत्यहार परमार्थरूप पृथ्विका वर्णन प्रवचनमै है। जानिये है रहुरि - गृहका स्थायी मुनानिक महानतादि अष्टाईय मृगगुण और चौरापोलाउ - उत्तरगुण अर स्वाध्याय भगान आहत रिहार - माम निकादि चा चारित्र चयाका धर्मध्यान शुश्रूषणादिका मल्लेखना मरणका ममस्तचयाका वर्णन प्रवचनम है। रहुरि चौदह गुणस्थानिका स्वरूप तथा चौदह जोरमभावनिका अर चौदह - मार्गणानिका वर्णन प्रवचन जानिये है तथा जावनिके एर सौ माडानिधानन लक्ष कुत्काड अर चौरमा लाख - जात्रिका योनस्थान प्रवचनहात जानिये है तथा चार अनुयोग चार शिक्षानत तीनगुणव्रत आगममैहो जानिये है। तथा चार गतिनिका भेद अर मय्यदर्शन सम्यग्धान मय्यक चारित्रका स्वरूप भगवानका प्ररूपा आगम हित जानिये है। रहुरि द्वादश भावना अर द्वादश तप अर द्वादश अङ्ग अर चौदह प्रकीर्णनिका स्वरूप प्रवचनहात जानिये है। रहुरि उत्सृष्टिणी अमर्षिणी, - कालकी

फिणीं अर योमैं छह-छह भेदरु कालमैं पदार्थकी परिणतिका  
 भेदनिका स्वरु आगमतैं जानिये है । बहुरि कुलरु-तीर्थरु  
 चक्रधर-वलदेव वायुदेव पृथिव्यासुदेव इत्यादिकनिकी उत्पत्ति  
 पृथ्वी धर्म तीर्थका पूर्वर्तन चक्रीका साम्राज्य, वहुदेवादिकनिके  
 शिखर, परिवार ऐश्वर्यादिक आगमहीतैं- जानिये है । बहुरि  
 जीवादिक द्रव्य नका प्रभाव आगमहीतैं जानिये है जातैं-आगमक  
 भक्तिपूर्वक सेवनविना कनुप्यजन्ममैं हू पशु ममान है, भगवान  
 सर्वांग चोतराग समस्त लोक जलोकक अनन्तान्त भूत, भविष्यत  
 वर्तमान कलवर्ती पर्यायनिकरि सयुक्त एक समयमैं युगपत् क्रम  
 रहित हस्तकी रेखायत् पत्यक्ष जान्या देख्या तारु पुरुष  
 क्रिया स्वरूपक सप्तक्रद्धि च्यार ज्ञानवारी गणवरदेव द्वादशारु  
 रचना प्रगट करी इहा ऐमा विशेष जानना जो देवाधिदेव परम  
 पूज्य धर्मतीर्थके पूर्वर्तन करनेवाले अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्त  
 चार्य अनन्तसुखरूप अनन्तज्ञानी अर समग्रमरणादि बहिरङ्गल-  
 क्ष्मीरु महित अर इन्द्रादिक अमख्यात देविके-समूहकरि  
 चन्दनीक चौतीस अतिशय अष्टप्रातिहर्यादि अनुपम ऋद्धिकरि  
 सहित अर क्षुधा-तृपादि अष्टादश दोसरहित समस्त जीवनिका  
 परमोपकारक अर लोक अलोकके अनन्तगुण पर्यायनिकी क्रम-  
 रहित, युगपत् ग्यानका धारक अर अनन्तशक्तिका धारक ससारमें  
 डूबते प्राणीक हस्तागलनन देनेवाला समस्त जीवनिका दयालु  
 परमात्मा परमेश्वर परमब्रह्म परमेष्ठी इत्यम शिव अजर अमर  
 अरहन्तादि नाम, कपि प्रियात अशरण, प्राणोनिक परमशरण



अनन्तको परमौदारिक देहमें तिष्ठता गणधरादिक मुनीश्वरनि-  
 करि । वन्दनीक म चरण जिनका अर कट तालुवा ओष्ठ जिह्वा  
 दिकक चलनहलनरहित इच्छाविना अनेक पूर्णानिका प्रपके  
 पृभापते उपज्या अर आर्य अनार्य समस्त दृश्यके पाणीनिका  
 ग्रहणमे आरता समस्त पापका घातक दिव्यधनिकरि मय्य  
 जीरनिका मोह अधिकारक नष्ट करता समरनिकरि धीज्यमान  
 छत्रवादि प्रातिहार्यके धारक रत्नमय मिहामन अर च्चार अंगुल  
 अतरीक्ष गिरानमान भगवान सकलपूज्य परमभट्टारक श्रीरघु-  
 मानदेवाधिदेव मोक्षमार्गक प्रकाशनके अर्थ समस्तपदार्थनिका  
 स्वरूप सातिशय दिव्यधनिकरि प्रगट किया तिम अग्रसम  
 निकटवीं निग्रन्थ ऋषिेश्वरनिकरि वन्दनीक मत्सरुपि सभृदि  
 च्चारिग्यानके धारक भ्रामातमानम गणधरद्वय रुद्ररुद्धि आदिक  
 ऋद्धिके प्रभापते भगवान भागिन अधरु नार्ही शिस्मरण होता  
 भगवानमापित अर्थक धारणकरि द्वादशांगरू रचना रही । जय  
 चतुर्थमालका तीनवर्ष साठ आठ महीना बाकी रही तदि  
 श्रीवद्मानस्यामो निगण गये पीठै गौतम धामी, तुषमाबाग,  
 जम्बूधामी छ तीन केवली रामठवष पगन्त केवल ज्ञानधरि  
 समस्त द्रव्यणा करी । पाँउ केवल ग्यानका अभाव मया तो  
 पाछे अनुत्तरकरि शिष्णु, निदिमत्र, अपराजित गोरधन, मद्र-  
 वाहू ये पाच मुनि द्वादशांगरू धारक अतवली भए तिनका  
 एक सौ वर्षका अमर समेत मया तिनके अमरमें भगवान  
 केवलीतुल्य पदार्थनिका ग्यान अर उल्लेख रही । चतुरि विशाल

स्वाचार्य, प्रोष्ठलाचार्य, - क्षत्रिय, - जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ,  
 शुक्तिपेण, - विजय बुद्धिमान गगदेव, धर्मसेन ये दश पूर्वके धारक;  
 एकादश परम निग्रंथ मुनीश्वर अनुक्रमतः एक सौ त्रियामी वर्ष-  
 में भये तेह यथावत् पूरणा करो गुरु नक्षत्र, जयपाल, - पांडु-  
 नाम, धर्मसेन, कसाचार्य ये पांच महापुनी एकादशग विद्या-  
 का - पारगामी - अनुक्रमतः दोयः सौ बीस - वर्षमें भये-  
 तेह यथावत् पूरणा करो । गुरु, सुभद्र, यशोभद्र,  
 भद्राह, महायश, लाहाचार्य ये पांच महापुनि एक प्रथम अगका,  
 पारगामी, एकसौ अठार वषमें अनुक्रमतः भये । ऐम भगवान्,  
 चोदतिनेन्द्रकू - निर्माण गये पाँछ छह सौ तिरासी वर्ष पर्यंत अग-  
 का ज्ञान रखा पाँछ ऐम कालके निमित्ततः बुद्धिवीर्यादिककी  
 मन्दता होते श्री कुन्दकुन्दादि अनुक्रम मुनि निग्रंथ बीतराणी-  
 अगके बह्नुनिका जानी हीते भये - तथा उमाश्यामी भये ऐसे  
 पापत भवभीत धनविघ्न नमस्सन्न परममजमगुणमण्डित मुक्तिकी-  
 परिपाटीत, अतका अभ्युत्थित अर्थके धारक बीतराणीनिका पर-  
 चारा चलो जाई तिनमें श्रीकुन्दकुन्दस्यामी समयमें, प्रवचनसार  
 पचास्तिरुय, अष्टपाहुडकू, आदि-लेय - अनेक ग्रन्थ रचते आधार  
 प्रत्यक्ष राचने पढ़नेमें आय है । इन ग्रन्थनिका जा विनयपूर्णक  
 आराधन सा प्रवचन भक्ति है । गुरु दश अध्यायकर तत्त्वार्थसूत्र  
 श्री उमाश्यामी रचया तिमकी, तत्त्वार्थसिद्धि नाम टीका - पुज्यपाद-  
 श्यामी रची है । अरः तत्त्वार्थसूत्र अरि, हो राजवार्तिक सोलह  
 हजार - श्लोकनिम्न, श्री अकरकदेव रचया अर श्लोकवार्तिक दोस-

दिया है सो परमदेवता है जो माता, पिता, ग्यानाभ्यास, करारें हैं-  
 ते कोट्या घन दिया । जे सम्प्रदानके, दाता, गुरु, हैं, तिनका-  
 उपकार, समान मात्र त्रैलोक्यमें कोऊ उपकारक नाहीं अरु शक्तके  
 देनेवाला गुरुका उपकारक, लोपै है तिस समान, कृतनी, नाहीं  
 पापो, नाहीं । ग्यानका, अभ्यास बिना व्यग्रहार परमार्थ, दोउनि-  
 में मूढ़ है यतैं, प्रवचन भक्ति ही, परमकल्याण है । प्रवचनका  
 सेवन बिना मनुष्य पशु समान है । या प्रवचन भक्ति, हतारार,  
 दोषनिका नाश करनेवाली है याका, भक्तिपूर्वक अर्थ । उतारण  
 करो याही त सम्प्रदर्शनकी उज्ज्वलता होय है । ऐसे प्रवचन-  
 भक्ति, नामांतरकी भावना वर्णन करी ॥ १३ ॥  
 आन, आनश्यकापरिहाणि नाम, चौदमी, भावना, वर्णन, कर-  
 है । आनश्य, करनेयोग्य होय ताकू आनश्यक कहिये है । आन-  
 श्यरुनिकी जे, हानि नाहो करनेका, चिन्तन, सो, आनश्यका-  
 परिहाणोनाम भावना है । अश्रम इन्द्रियनिके, बंध, नाहो सो  
 आनश्य कहिये, आनश्य, जे, मुनि, तिनको जे, क्रिया, सो, आनश्यक  
 है । आनश्यरुकी, हानि नाहो करनासो आनश्यकापरिहाणि कहिये  
 ते आनश्यक छह, प्रकार हैं । सामाजिक स्तन, बन्धना, प्रतिक्रमण-  
 स्वाध्याय, कापोत्सर्ग ये छह, आनश्यक, हैं सो कहिये, हैं । जे देह,  
 तें भिन्न, ग्यानमयही जाके देह ऐसा, परमात्मस्वरूप, कर्मरहित  
 चैतन्यमात्र शुद्धजीवरू, एकाग्रहार, ध्यायता मुनि है सो, सर्वोत्कृष्ट,  
 निराणकू प्राप्त होय है अरु जा विकल्परहित शुद्धआत्माके गुण-  
 निमे आपका मन, नाहो तिष्ठे, तो, तपस्वीमुनि पट, आनश्यक



दिया है या परमदेवता है जो माता, पिता, ग्यानाभ्यास, कराने है, ते कोट्या धन दियो। जे सम्यग्दर्शनके, दाता गुरु है, तिनका उपकार समान मान, त्रैलोक्यमे कोऊ उपकारक नाहीं, अरु ज्ञानके, देनेवाला गुरुका उपकारक लोप है तिस समान कृतनी, नाहीं पायो नाहीं। ग्यानका अभ्यास बिना, व्यग्रहार परमार्थ, दोउनि-मे मूढ है यत्ति, प्रवचन भक्ति ही, परमकल्याण है। पूजचनका सेवन बिना मनुष्य पशु समान है। या पूजचन भक्ति, हजारी, दोषजिका नाश करनेवाली है याका, भक्तिपूर्वक अर्घ्य, उतारण करो याही ते सम्यग्दर्शनकी, उज्ज्वलता होय है। ऐसे पूजचन-भक्ति, नामांतरही मानना वर्णन करी ॥ १३ ॥

आन आवश्यकपरिहाणि नाम चौदमोः भावना, वर्णन करे हैं। आवश्यक करनेयोग्य होय ताकू आवश्यक कहिये हैं। आवश्यकताको जे, हानि नाहीं करनेका, चिन्तन, सो आवश्यकता परिहाणीनाम भावना है। अथवा, इन्द्रियनिके, बंध-नाही सो आवश्यक कहिये, अथवा, जे, मुक्ति, तिनको जे क्रिया, सो आवश्यक है। आवश्यकताकी, हानि नाहो करनासो आवश्यकपरिहाणि कहिये ते आवश्यक छह, प्रकार-हैं। मामाधिक स्तव, चन्दना, पुतिकमण्य, श्राद्धपाय, काषोत्सर्ग ये छह, आवश्यक हैं सो कहिये हैं। जे देह तें भिन्न, ग्यानमयही जाके दह, ऐसा, परमात्मस्वरूप, कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकू एकागूरार, ग्यायता मुनि है सो, सर्वोत्कृष्ट, निवाणकू प्राप्त होय है अरु जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुण-विशेष, आपका भन, नाहीं तिष्ठे, तो, तपस्वीमुनि प्रद, आवश्यक



दाता  
दा श जोपरम  
जो धर्मताकरि

गन्धाहा तात आप वृषभहा अरुणगतक सकल प्राणीनिम गुण



क्रिया हैं तिनको पुष्ट करो अङ्गीकार करो अर आपते जशुभकर्म  
 के आसन्नक निराकरण करो टालो प्रथम तो सुन्दर असुन्दर  
 वस्तुमें तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमें रागद्वेष मति करो तथा  
 आहार वस्तिरकादिकनिका लाभमें या अलाभमें समभाव करो जाते  
 स्तुतिमें, निन्दामें, आदरमें, अनादरमें, पापानमें, रत्नमें, जीपनम  
 मरणमें, वैरीमें, मित्रमें, सुखमें, दुःखमें, स्मशानमें, रागद्वेष रहित  
 परिणाम होना सो समभाव है । जाते साम्यभायके धारक हैं ते  
 बाह्य पुद्गलनिक अवेशन अर आपते भिन्न अर अपने जातस्व-  
 भायमें हानि हृदिके अकृता जानि रागद्वेष छोड है अर आपक  
 शुद्ध ज्ञातादृष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै  
 है ताके साम्यभाव होय है मोही सामायिक है वहुनि भगवान्  
 जिनेन्द्रक अनेक नामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आर-  
 ह्यक है जो कर्मरूप वैरीक आप जीते ताते जिन हो अर अपने  
 स्वरूपमें आपकरि तिष्ठो हो ताते स्वयम्भु हो अर केवलज्ञान  
 रूप नेत्रकरि त्रिकालगत पदार्थनिक जानो हो ताते त्रिलोचनहो  
 अर आप मोहरूप धन्यासुरक मास्वा ताते अन्धकान्तक हो आप  
 घातियाकर्म रूप अधरैरीनिका नाश करके हो अदितये ईश्वर  
 पना पाया ताते अधिनारीश्वर हो आप शिखर जो निर्गणपद  
 तामे नसे ताते आप शिख हो पापरूप वैरीको सहार करो होतात  
 आप हर हो लोकमें मुखका कता ताते आप शकर हो श जोपरम  
 आनन्दरूप सुख तामे उपजे ताते समन हो द्रुप जो धर्मताकरि  
 दिपो हो ॥ १५ ॥ अर जगतक सकल प्राणीनिमें



स्वयं है सा परमदेवता है जो माता, पिता, ग्यानाभ्यास, कराने हैं-  
ते, कोट्यां धन दिया । जे-सम्यग्ज्ञानके, दाता गुरु हैं-तिनका

क्रिया हैं तिनको पुष्ट करो जड़ोकार करो अर जानते अशुभकर्म  
 के आसन्नक निराकरण करो टालो प्रथम तो सुन्दर असुन्दर  
 वस्तुमें तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमें रागद्वेष मति करा तथा  
 आहार वस्त्रिकादिकनिका लाभमें वा अलाभमें समभाव करो जात  
 स्तुतिमें, निन्दामें, आदरमें, अनादरमें, पापाणमें, रत्नमें, जीवनमें  
 मरणमें, वैरीमें, मित्रमें, सुखमें, दुःखमें, स्मृतिमें, रागद्वेष रहित  
 परिणाम होना सो समभाव है । जहाँ साम्यभावके चारक हैं ते  
 बाह्य पुद्गलनिके अनेक अर आपत्ति भिन्न अर अपने जानमस्व-  
 भावमें हानि दुर्द्विके अकृता जानि रागद्वेष छुड़ है अर आपक  
 शुद्ध ज्ञाताद्वयारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठ  
 है ताके साम्यभाव होय है सोही साम्याधिक है गुरु भगवान  
 जिनेंद्रक जनेक नामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आप-  
 द्यक है जो कर्मरूप परोक आप जीत ताते जिन हो अर अपने  
 स्वप्नमें आपकरि तिष्ठो हो ताते स्वयम्भु हो अर कैवलजान  
 रूप नेत्रकरि त्रिकालवती पदार्थनिक जानो हो तात त्रिलोचनहो  
 अर आप मोहरूप जन्धासुरक मास्त्रा ताते अन्धकान्तक हो आप  
 घातियोकर्म रूप अवयवीनिका नाश करके ही अदित य ईश्वर-  
 पना पाया तात जेधनारीश्वर हो आप शिखरदे जा निर्माणपद  
 तामे उसे तात आप शिख हो पापरूप धरोका संहार करो हो तात  
 आप हर हो लोकमें सुखका कर्ता तात आप शंकर हो श जीपरम  
 आनन्दरूप सुख तामे उपज तात समग्र हो वृष जो धर्मताकरि  
 दिपो हो तात आप वृषमें हो अर जगतके सकल प्राणीनिमें गुण

निम्नरि बड़े ताते जगज्येष्ठ हो क जो सुखताकरि समस्त जीवन  
 की पालना करी ताते आप कपाली हो कैरल ज्ञानकरि ममस्त  
 लोक अलोकमें व्याप्त हो रहे ताते आप त्रिष्णु हो अर जन्मजरा  
 मरणरूप त्रिपुरक मात्स्य ताते आप त्रिपुरातक हो ऐम एकइजार  
 ओठ नामरि आपका स्तन इन्द्र किया है । अर गुणनिकी  
 अपेक्षा आपका अन्त नाम है । ऐम भावनिमं गुणचिन्तनकरि  
 जा चायाम तथैकरनेका स्तन करै है मा स्तन नामआश्रयक  
 ह ॥ २ ॥ बहुरि चतुर्विधति तोर्यकरने में त एस्तोर्यकरनेका  
 वा अरहत मित्र आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुनर्म त एरुक् मुख-  
 करि स्तुति करना सो बन्दना आश्रयक है ॥ ३ ॥ बहुरि जो  
 समस्त दिनमे प्रमादके वश होया तथा कषायनिक वश हाय वा  
 विपर्यय मे रागद्वेषी होय कोऊ एकन्द्रियादिक जीवनिका घात  
 किया तथा जनर्थक प्रयत्न किया वा सदेवमोजन किया वा  
 किसी जीवका प्राणपीडित किया तथा कर्कश कठोर मिथ्या  
 वचन कथा वा किसीकी निन्दा अपराध किया अपनो प्रशमा  
 करा वा स्त्री कथा भोजन कथा देश कथा राज्य कथा करी  
 तथा अदत्तधन ग्रहण किया वा परक वनमें लालमा करी  
 तथा परकी स्त्रीमे राग किया यथा धन परि गूहादिकमें  
 लालसा करा ते ममस्त पाप छोटे क्रिये बन्धनके कारण  
 क्रिये, अब ऐसा पापरूप परिणामनिक भगवान पच परम  
 गुरु हमारी रक्षा करहु अब ऐ परिणाम मिथ्या होहु पचपरमेष्ठो  
 के प्रमादते हमारे पापरूप पल्लिगम मति होहु ऐसे भावनिकी

शुद्धता रास्ते कायेत्पुर्णकरि पच नमस्कारके नय जाप्य करै ऐसे  
 समस्त दिनकी प्रवृत्तिकूँ सध्याकाल चिन्तनकरि पापपरिणाम  
 निहू निन्दना सो दैवसिद्ध प्रतिक्रमण है । अर रात्रि मग्नन्धी  
 पापका दूरि करनेके अर्थ प्रभात प्रतिक्रमण करना सो रात्रिक  
 प्रतिक्रमण है । बहुरि मार्गमे चालनेमे दोष लग्या ताका शुद्धिका  
 जा प्रतिक्रमणसो ऐर्यापथिक प्रतिक्रमण है । एरु पक्षके दोष  
 निराकरण करनेके अर्थ पाक्षिष्य प्रतिक्रम है क्यार महीनेके दोष  
 निराकरणके अर्थ प्रतिक्रमण करना चार्तुमासिक प्रतिक्रमण है  
 एरु वर्षके दोष निराकरणके अर्थ मायसरिक प्रतिक्रमण है ममस्त  
 पर्यायके कालका दोष निराकरणके अर्थ अन्त्य सन्यासमरणकी  
 आदिमें प्रतिक्रमण है सो उत्तमार्थ प्रतिक्रमण है ऐसैं मात प्रकार  
 प्रतिक्रमण है तिनमे गृहस्थके सध्या अर प्रभाततो अपना नफा  
 टोटा अवश्य देखना योग्य है । इहा जो सो पचाम रुपयाका  
 व्ययहार करनेगला हू आधगनै ठिगाई देखै हैतो इस मनुष्य  
 जन्मको एरु एरु घडो कोटिघनमे दुर्लभ गया पाठ नहीँ सिलै  
 हैयाका विचारहू अवश्य करना जो आज मेरे परमेष्ठोका  
 पूजनम स्तनमें केता काल गया अर स्वाध्यायमें पचपरमगुणके  
 शास्त्र श्रवणमें तत्त्वार्थकी धरचामैं धर्मात्माकी वैयारुत्तिमें  
 केता कल गया अर घरके आरममें कपायमें तथा विरुथा  
 करनेमें विसादमें भोजनादिकमें वा अन्य इन्द्रियनिके  
 विषयनिमें प्रमोदमें निद्रामें शरीरके सस्कार में हिमादिक  
 पच पापनिमें केता काल गया है ऐसा चिन्तनकरि पापमें

घटुत पृथुति भई होय तो आपसू विहर डेय पाप बन्धक  
 कारणनिकू घटाय बर्म कायर्म जन्माकू युक्त करना योग्य है  
 पचकालम प्रतिक्रमण ही परमागमम उर्म कथा है । आत्माका  
 हित अहितका विचारम निरन्तर उद्यमी रहना योग्य है । ये प्रति  
 क्रमण आत्माकी भडी मात्राणा मग्नेमाला है अर पूर्वले क्रिये  
 पापकी निर्जरा कर है ॥ ४ ॥ अरि आगामो 'कालम आपके  
 अस्त्राके राखनेके अर्थ पापनिका त्याग करना जो आगे मे ऐमा  
 पाप करहु मन वचन मयम्या नाहों करुगा सो प्रत्याप्यान नाम  
 आवश्यक सुगतिका कारण है ॥ ५ ॥ अहुरि अपार अगुलके अन्त  
 रालं डोऊ पग प्रेसरि खटा रहै दोउहस्तनिकू लन्यायमानकरि  
 दहया मयता छाडि नामिकाका अगमै दृष्टि वारि देहते गिन्न  
 शुद्ध आत्माकी भावना करना सो कायेत्परम है । मा निश्चय  
 पद्मासनत दू हाय अर गडा दहकरि दू होय दोऊनिमै  
 शुद्धप्यानका अलम्बनत सफल है । ६ । ए छह आवश्यक  
 परमधर्मरूप हैं इनकू पूजि पुष्पाजलि स्नेह अर्थ उत्तारण  
 योग्य है । ' अहुरि ए छह आवश्यक परमागमम छह  
 छह प्रकार कथा है । ' नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव  
 करि पट प्रकार जानना । शुभ अशुभ नामकू धरणकरि राग  
 द्वेष नोही करना सो सामयिक है । कोऊ स्थापना प्रमाणादिक  
 करि सुन्दर है कोऊ प्रमाणादिक करि होनाधिक करि सुन्दर है  
 तिनके निषे राग द्वेषका अभाव सो स्थापना सामायिक है ।  
 सुगण रूपा रत्न मोती इत्यादिक अर मृत्तिका काष्ठ पाषाण

कण्टक छार भस्म धूल इत्यादिकनिर्मे रागद्वेष रहित सम देखना  
 सो द्रव्य सामायिक है । महल उपरनादि रमणीक श्मशाना-  
 दिक अरमणीक क्षेत्रमें रागद्वेष छानना सो क्षेत्र सामायिक है  
 हिम शिशिर धमन्त ग्रीष्म वर्षा शरत ये ऋतु अर रात्रि दिनस  
 अर शुक्लपक्ष कृष्णपक्ष इत्यादिक काल निर्मे रागद्वेषको वर्जन  
 सो काल सामायिक है अर ममस्त जीवनिवे दुख मति मोह  
 ऐमा मंत्रीभायक अशुभ परिणामनिका अभाय करना सो भाय  
 सामायिक है ऐम छह प्रकार सामायिक कछा । अर छह प्रकार  
 स्तवन कहै है चतुर्विंशति तीर्थकरनिका अर्थ महित एक हजार  
 आठ नामकरि स्तवन करना सो नाम स्तवन है अर कृत्रिम  
 अकृत्रिम अपरिमाण तीर्थकर अरहन्तनिके प्रतिनिम्बनिका स्तवन  
 सो स्थापना स्तवन है अर समग्रमरणस्वित काल देह प्रमा प्राति-  
 हार्यादिकनि करिस्तवन सो द्रव्य स्तवन है अर बलाश ममेदाचल  
 ऊर्ध्वन्त ( गिरनार ) पात्रापुर चम्पापुरादि निर्माण क्षेत्रनिका तथा  
 समवसगणमें वर्मोपदेशक क्षेत्रका स्तवन सो क्षेत्र स्तवन है । अर  
 स्वर्गावतरण जन्म तप ज्ञान निर्माण कल्याणके कालका स्तवनसो  
 काल स्तवन है अर केवल ज्ञानादिअनन्तचतुष्टय भावका स्तवन  
 सो भाव स्तवन है ऐम छह प्रकार स्तवन कछा । ए तीर्थकर  
 चामिद्ध तथा आचार्य उपाध्याय साधु इनमें एकका नामका  
 उच्चारण करना सो नाम बन्दना है । अर अरहत्त सिद्ध आचा-  
 र्यादिकनिर्मे एकका प्रतिनिम्बादिककी उदना सो स्थापन बन्दना  
 है । तिनके शरीरकी बन्दना है । तिनके शरीरकी बन्दना सो

द्रव्य बदना है । अरहत मिठ आचार्यादिकनि करि व्याप्त जो क्षेत्रताको बदना सो क्षेत्र बदना है । तिन ही पंचभरमगुरुनिमें कोऊ एरुकरि व्याप्त जे काल तारी बदना सो काल बदना है । एक तीर्थस्रफा वा सिद्धका वा आचार्यका वा उपाध्यायका वा साथुके आत्मगुणनिहू बदना करना सो भाव बदना है । ऐसैं छह प्रकार बदना कही ।

अब छह प्रकार प्रतिक्रमण कहैं हैं । अयोग्य नामके उच्चारणमें कृतकारित अनुमोदनारूप मनवचन कायते उपज्या दोषका निराकरणके अर्थ प्रतिक्रमण करना सो नाम प्रतिक्रमण है । कोऊ शुभ अशमस्थापनाका निमित्तत मन वचन कायते उपज्या दोषतें अत्माक निवृत्त करना सो स्थापना प्रतिक्रमण है । अर द्रव्य जो आहार पुस्तक औपधादिकके निमित्तत मपत्रचनकायतें उपजा दोषका निराकरणके अर्थ द्रव्यप्रतिक्रमण है धर्म गमन-स्थानादिकके निमित्ततें उपज्या अशुभ परिणाम जनित दोषनिका निराकरणके अर्थ धर्म प्रतिक्रमण है । अर दिनम रात्रि, पक्ष, ऋतु, शीत, उष्ण, वषाकाल इनके निमित्ततें उपज्या अतोचारको दूर करनेक प्रतिक्रमण करना सो काल प्रतिक्रमण है । अर राग द्वेषादि भावनिर्त उपज्या दोषके दूर करनेक भाव प्रतिक्रमण है । बहुरि अयोग्य पापके कारण जे नाम उच्चारण करनेका त्याग सो नाम प्रत्यागमन है अर अयोग्य मिथ्यात्मादिक प्रवृत्ता-वनेवाली स्थापना करनेका त्याग सो प्रत्याग्यान है । पापबन्धन कारण सद्दोषद्रव्य वा तपके निमित्त निर्दोष द्रव्यका मनवचन

कार्य करि त्याग सो द्रव्यपूतारयान है बहुरि असजमका कारण  
 क्षेत्रका त्याग सो क्षेत्र पूतारयान है मिथ्यात्व असजम रूपा-  
 दिकनिका त्याग सो भाव पूतारयान है ऐसे छह प्रकार पूतार-  
 ख्यान वर्णन किया । अब छह प्रकार कायोत्सर्ग कहै है ।  
 पापके कारण कठार कटक नामादिकते उपज्या दोष दूर करने  
 अर्थ कायोत्सर्ग करना सो नाम कायोत्सर्ग है । पापरूप स्थापना  
 का दारकरि आया अतीचार दूरकरनेक कायोत्सर्ग करना सो  
 स्थापना सो कायोत्सर्ग है । सदापद्रव्यके सेवनतै तथा  
 सदापक्षेत्रकालके सेवनतै सयोगत उपज्या दोष दूर करनेक  
 कायोत्सर्ग करना सो द्रव्यक्षेत्रकाल कायोत्सर्ग है । मिथ्यात्व  
 असजमादिक भावनिकरि कीया दोष दूर करनेक  
 कायोत्सर्ग करना सो भाव कायोत्सर्ग है । ऐसे छह  
 प्रकार छह आवश्यक वर्णन किये । अब गृहस्थके और दू  
 छह प्रकारके आवश्यक हैं । भगवान जिनेन्द्र नित्य पूजन  
 करना, निर्ग्रन्थगुरुनिका सेवन स्तवन चिन्तन नित्य करना अर  
 जिनेन्द्रके प्ररूपे आगमका नित्य स्वाध्याय करना इन्द्रियनिक  
 विषयनितै रोकना छह काय जीवनकी दया पालना सो सयम  
 है, शक्ति प्रमाण नित्य तप करना, शक्ति प्रमाण नित्य दान  
 देना ये षटप्रकार दू आवश्यक गृहस्थको नित्य नियमते जह्नीकार  
 करना योग्य है । ऐसे समस्त पापका नाश करनेवाली भावनिष्ठ,  
 उज्ज्वल करनेवाली आवश्यकनिकी 'हानिका' अभावरूप चौदमी  
 आविनी वर्ण करी ॥१४॥



अब सन्मार्ग प्रभावना नाम परमी भावना वर्णन करे हैं।  
 इहाँ स-मार्ग ने मोक्षका मत्पार्थ मार्ग ताका प्रभाव प्रगट करना  
 सो मार्ग प्रभावना है। सो मन्मार्ग रत्नत्रय आत्मा स्वभाव है  
 ताक मिथ्य च राग, द्वेष, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, ये  
 निपरीत करि जनादिन मलीन निपरीतकरि राख्या है अब  
 परमागमका शरण पाय भोक्ता मिथ्यात्वादिक दोषनिकू  
 त्रिकरि रत्नत्रय हमाराक उबलकरना ये मनुष्यजन्म  
 अर इन्द्रियपूर्णता अर ज्ञानशक्ति अर परमागम, का, शरण  
 अर माधर्मिनिका समागम अर रोगादिकरहितपना अर  
 जतिस्नेह रहित जीनिका इत्यादिक पुण्यकर सामग्री पायकरके  
 हू जा आत्माक मिथ्यात्वरुपाय निषवात्तिक तै नाही छुड़ायातो  
 अनन्तानन्त दुःखनिका भत्या समार समुद्र तै मेरा निरूपना  
 अनन्तकालहूम नाही हायगा जो सामग्री अगर मिली है सो  
 अनन्तकालमैहू दुर्लभ है अर अन्तरंग बहिरंग सरल सामग्री  
 पायकरके हू जो आत्माका प्रभाव नाही प्रगट करेगा तो अचानक  
 फाल जाय समस्त मयोग नष्ट, कर देगा ततै अचमै रागदेख  
 मोठ दूरकरि जैसे मेरा शुद्ध वातराग स्वरूप अनुभवागोचर होय  
 तैम ज्ञान स्वरूपायमै तत्पर होना। बहुविबाह्य-प्रवृत्तिभी मेरी,  
 उज्जर करि अन्तर्गत धर्मका प्रभाव प्रगट करि माग प्रभावना  
 राना, जाक देखि अनेक जोननिके हृदयमै, धर्मकी महिमा प्रवेश  
 करि जाय। जिनेन्द्रका उत्सव ऐसा करना जाक देखि हजारों  
 लाभनिरा भाव जिनेन्द्रके जन्म कल्याण, समय, जैमै, इन्द्रादिक

देन अभिषेक करि अपना जन्म मफरु किया तैम जयजयकारशब्द  
 करि हजारों स्वरका उच्चारण करि लोक आपक कृतार्थ मान तेन  
 मन प्रकृष्टमत हो जाय तैस अभिषेक करि प्रमायना करना तथा  
 जिनैन्द्रका पाठ भक्ति अर उड़ी विनय अर निश्चल ध्यान करि  
 तेमे पूजन करो जाक करते देखते अर शुद्ध भक्तिके पाठ पढ़ते  
 तथा श्रवण करते हर्षके अकूरे प्रगट होय आनन्द हृदयमे नाही  
 ममायता बाह्य उछलने लगजाय जिनक देखि मिथ्यादृष्टिकाहू  
 ऐसा परिणाम हो जाय अहां जैनीनकी भक्ति आश्चर्यरूप है  
 जामे ये निर्दोश उत्तम उज्ज्वल प्रमाणीक मामग्री अर ये उज्ज्वल  
 सुगर्णके रूपाके तथा काशी पीलमय मनोहर पूजन के पात्र अर  
 ये भक्तिके रमकरि भरे अर्थ महित कर्णनिक अमृतरूप मीचते  
 शुद्ध अक्षरनिका उच्चारण अर एकाग्ररूप विनय सहित शब्दनि  
 क अनुकूल उज्ज्वल द्रव्यका चढायना अर ये परमशातमुद्रारूप  
 वातरागके प्रतिबिम्ब प्रतिहार्यनिकरि भूषितका पूजना स्तवन  
 करना नमस्कार करता धन्य पुरुषनिकरि होय है । धन्य इनकी  
 भक्ति अन्य इनका जन्म कर धन्य इनका मनचनकाय अर धन्य  
 इनका धन नो निर्गलक होय ऐसे सन्मार्गमे लगावे है । ऐसा  
 प्रभाव व्याप्त हो जाय । अर देखनेत अर श्रवण करनेत निकट  
 भक्तिके आनन्दके अश्रुपात झरने लगजाय । भक्ति ही ससार  
 समुद्रत डूबवेक हस्तावरुम्भन देनेवाली है हमारे भयभयमें  
 जिनैन्द्रकी भक्ति ही । श्रवण होहू ऐसा जिनैन्द्रका नित्य पूजना  
 करना तथा अष्टादिके परमै तथा षोडशकारण दशलक्षण रत्नमे

पूर्वमें समस्त पापके आरम्भ छाँडि जिनपूजन करना आनन्द  
 सहित नित्य करना र्णनिक प्रिय ऐसे चारित्र बनायना तथा  
 स्वर ताल मूर्छाना सहित निनेन्द्रके गुण गावने समस्त सन्मार्ग  
 प्रभावना है । मो जिनके हृदयमें सत्यार्थ धर्म बस है तिनके  
 प्रभावना होय है । बहुत जिनके प्रभुमें च्यार अनुयोगनिके  
 सिद्धातनिका ऐसा व्याख्यान करना जाक श्रवण करनेतें एसा  
 हृदयत रवि जाय पापनित कापने लगिजाय व्यमन छूटि जाय  
 दयारूप धर्ममें प्रवर्तन हो जाय अमश्य भक्षणका त्याग हो जाय  
 ऐसा व्याख्यान करना जाके श्रवण करनेत हजारा मनुष्यनि  
 कुदेव केगुरु कुधर्मके अराधनका त्याग हो मर् अर वीतराग देव  
 दयारूपधर्म आरम्भ परिग्रह रहित गुरुनिक आराधनमें दृढ श्रद्धान  
 हो जाय तथा ऐसा व्याख्यान करना जो श्रवणकरि बहुत मनुष्य  
 रात्रि भोजन अयोध्य भोजन अन्यायका विषय परधनमें राग  
 छाँडि नतनिमें शीलम सयमभरवम सतोपभावम लीन होय जाय  
 तथा ऐसा उपदेश करना जाकरि दहादिक परद्रव्यनित भिन्न  
 अपने आत्माका अनुभन होना पयायमें आपा छटनो जीव अजी  
 वादिक द्रव्यनिका प्रमाणनयनिक्षेपनिकृतिनिणय होय मशयरहित  
 द्रव्यगुण पयायनका सत्यार्थ स्वरूप प्रगट श्रजाना मिथ्या अन्ध  
 कार दुरर होना ऐसा आगमका व्याख्यानत तपकरि भावना होय  
 है । क्योंकि विषयानुराग छाँडि निर्वा छक होनेकरि नहीं धारण  
 किया जाय ऐग तपकरि प्रभावना होय है । क्योंकि विषयानुराग  
 छाँडि निर्वा छक होनेकरि आत्माका प्रभावभी प्रगट होय है अर

धर्मका मार्ग भी तपहीतै दीपै है । यो तप ही दुर्गतिको  
 मार्गको नष्ट करनेवाला है । तप बिना कामादिक विषय ज्ञानको  
 चारित्रिक नष्टकरि देहै तपके प्रभावतैं कामका क्षय होय रसना  
 इन्द्रियकी चपलता नष्ट होय लालमाका अभाव होय है यातैं रत्न  
 ग्रयकी प्रभावना तपहीतै दृढ होय है । बहुरि जिनेन्द्रका प्रति-  
 निम्बकी प्रतीष्टा करना जिनेन्द्रका मन्दिर कराना यातैं रत्न-  
 सन्मार्गकी प्रभावना है जातैं प्रतीष्टा करानेकरि जहा ताई जिन  
 निम्ब रहैगा तहा ताई दर्शन स्तवन पूजनादिकरि अनेक भव्य  
 पुण्य उपार्जन करैगे अर जिनमन्दिर करौंगे तिन गृहस्थनिका  
 ही धनपावना सफल होयगा । पूजन रात्र जागण शास्त्रनिका  
 व्याख्यान श्रवण पठन जिनेन्द्रका स्तवन सामायिक प्रतिक्रमण  
 अश्ननादिक तप नृत्यगान भजन उत्तम जिनमन्दिर होय तदि  
 ही होय जिनमन्दिर बिना धर्मका समस्त समागम होय ही नाही  
 यातैं बहुत कहा लिखिये अपना अर परका परम उपकार का मूल  
 प्रतिष्ठा करना अर मन्दिर करानाहै उत्कृष्टधर्मका मार्गतो समस्त  
 परिग्रह छाडि वीतरागका अङ्गीकार करनाहै परन्तु जाके प्रत्या-  
 ख्यान वा अप्रत्याख्यान नाम कषायका उपशम भया नायी तातैं  
 गृहसपटा छाडि जाय नाहीं अर धनसपटा बहुत होय तो प्रथम  
 तो जिनका आप अन्योयसू धन लिया होय ताके निरुद्ध जाय  
 क्षमा ग्रहण कराय उनका धन लोटा देना बहुरि धन बहुत होय  
 तदि नवीनधन उपार्जनका त्याग करना बहुरि तीन्मार्गके बधा-  
 बधावनेवाले इन्द्रियनिके विषयनिकी, लालमा छाडि त्याग करि

वात्सल्य है तथा व्रतनिके धारक अर पापमू भयभीत न्यायमार्गी धर्ममें अनुरागके धारक मन्दकपायी सतोषी ऐसे श्रापक तथा श्रापिका तिनको गुणनिमै तिनकी सगतिमें अनुराग धारण करना सा वात्सल्य है तथा जे म्योपर्यायमे व्रतनिकी हृदक प्राप्त भये और समस्त गृहदिक परिग्रह छडि कुटुम्बका ममत्व तनि देहमे निर्ममत्ता धार पच इन्द्रियनिक त्रिषय त्यागि एकरश्ममात्र परिग्रहक अरलम्बनकरि भूमशयन व्रुधा वृषा शोतउष्णादि परिग्रहनिकरि सहनेकरि मयममहित ध्यान स्वाध्याय सामायिकादिक आ वश्यकनिकरि युक्त जज्ञिकाको दोषो ग्रहणकरि समय सहित काल व्यतीत करै हैं तिनको गुणनिमै अनुराग सो वात्सल्यभाव है तथा सुनीश्वरनिकी ज्यो धनमें निराम करते बाईस परिग्रह सहते उत्तम क्षमादि धमके धारक देहमे निर्ममता आपकेनिमित्तक्रिया औषधि अन्न पानादि नाहीं ग्रहण करते एक वस्त्र कोपोनबिना समस्त परिग्रहके त्यागी उत्तम श्रापनिके गुणनिमै अनुराग सो वात्सल्य है तथा देव गुरु धर्मका सत्याथ स्वरूप जानि दृढश्रद्धानो धर्ममें रुचिके धारक अव्रतसम्यग्दृष्टिमें वात्सल्यता कहू । इस समारमें अपने स्त्री पुत्र कुटुम्बादिकनमे तथा देहमे इन्द्रियनिक त्रिषयनिमे त्रिषयनिके साधकनिमे अनादित अति अनुरागी होय याहीके अर्थ कहै हैं मरै हैं अन्यकू मरै हैं ऐसा कोऊ कोऊका अद्भुत माहात्म्य है । ते धन्य पुम्प हैं जे मम्यज्ञानतै मोहकू नष्टकरि आत्माके गुणनिमें वात्सल्यता करै हैं ससारो लोभनकी लालमाकरि अति आलुल भए धर्ममें वात्सल्यता त्यागे हैं अर

संतारीनिके धन बंध है। समाधर्मका मार्ग भूल जाय धर्मा-  
त्मानिमें दूरहोतै वात्सल्यता त्यागै है रात्रिदिन धन सम्पदाके  
चधानतई ऐसा अनुराग बंध ह लासनिका धन हो जाय तो  
कोशनिमें बाड़ा करता आरम्भ परिग्रहकू उधानता पापनिमें  
पूरीणता यगयता वर्ममें बन्धन नियमत छाडै है जहा दाना  
विक्रनिमें परोपकारमें धन लगानता दोस तहा दूरहोतै टलि  
निकलै है अर बहु आरम्भ बहु परिग्रह अतिवृष्णात समीप  
जाया नरकका गम ताकू नाहों देखै है तामें ५चमकाल  
थनाट्यां तो पूर मिथ्याधम कुपायदान कुदाननिमें रचि ऐसा  
कर्म रात्रि आया है सो नरक तिर्यचगतिकी परिपाटी  
अमरपातकाल अनतकाल पर्यन्त नाहो छुटे उनका तन मन  
चयन धन वर्मकार्यमें नाहो लागै है । रात्रि दिन वृष्णा  
अर आरम्भ करि क्लेशित रहै तिनके धर्मात्मामें अर धर्मके  
धारणामें कदाचित् वात्सल्यता नाहों होय है अर धर्मरहित  
धर्मात्मा हू होय ताकू नीचा मानै है तातें सो आत्महितके बाछक  
ही धनसम्पदाकू महामदकी उपजानेवालो जान अर दहकू  
अस्थिर दुःसदायी जानि कुटुम्बकू महा बन्धन मानि इनसब  
प्राप्ति छाडि अपने आत्माकू वात्सल्य करो धर्मात्मामें ब्रतीनिमें  
स्वाध्यायमें जिनपूजनमें वात्सल्यता करो । जे सम्यग्चारित्ररूप  
आभरणकरि भूषित माधुजन हैं तिनको स्तवन करै है गौरव करै  
हैं तिनके वात्सल्यनाम गुण है सो उगतिकू प्राप्त करै है वात्स-  
ल्यगुणके प्रभाव करके ही समस्त ब्रह्मशाग प्रिया सिद्ध होय है

ज्ञातं मिद्वान्तध्वजम् अर सिद्धान्तम् उपदेश करनेवाला उपाध्याय  
 म माया भक्तिक पमारत श्रुतज्ञानावरणम्भम्भ रम ग्रन्थिनाय है  
 तदि सकल विद्या सिद्ध होय है । वात्मगुणके धारक दम  
 नमस्कार कर है और वात्मन्य करके ही जठारह त्रिदि प्रहृ  
 दाय पकार चारणक्रद्धि अनेकपकार अर अष्टपकार विप्रियार्यदि  
 तीन प्रकार मलक्रद्धि मत्तपकार तपक्रद्धि उह प्रकार रमक्रद्धि  
 उह प्रकार औषधक्रद्धि दाय प्रकार क्षेमक्रद्धि इत्यादिक अनेक  
 शक्ति प्रगट होय है । इहा श्रद्धिनिम्भ हस्त्य रुद्धिये तो फलनि  
 र्घि जाय नार्त नाही लिख्या है सदात जानना । वात्मन्य  
 करके ही मदबुद्धिनिम्भ ह मतिज्ञान श्रुतज्ञान विस्तारण होय है  
 वात्मन्यरु प्रभारत पापका प्रेग नाही होय है वात्मन्य करके  
 भूपित होय है तपम उत्साह बिना तप निरर्थक है । यो निनेन्द्र  
 का माग वात्मन्य करके ही शोभा प्राप्त होय है । वात्मन्य  
 करिहा शुभ ध्यान रुद्धिक प्राप्त होय है वात्मन्यरु ही गम्यद-  
 र्शन निर्माण होय है । वात्मन्य करके ही दान दिया कृतार्थ  
 होय है । पात्र है इति बिना तथा दनम पीति बिना दान निद्रा  
 का कारण है निनराणीम वात्मन्य जाके हायगा ताहीके पशमा  
 योग्य माया ज्य उद्योतरूप होयगा जार निनराणी वात्मन्य  
 नाही प्रिय नाही ताके यथायत ज्य नाही देखेगा विपरीत  
 ग्रहण करेगा इस अनुप्य जन्मका मडा वात्मन्यही है वात्मन्य  
 रहित बहुत ममज्ञ कारण वस्त्र आरण वस्त्र धारण करना है पद  
 पिष्टम निन्द्य होय है । अर इस लोकका कार्य जो यशको

उपाजन धर्मको उपाजन धनको उपाजन सो वात्सल्य हीत होय है । अरु परलोक जो स्वर्गलोकमे महद्विक वेदना सो हू वात्सल्य हीत होय है वात्सल्य बिना हम लोकका समस्त काये नष्ट हो जाय अरु लोकमे देवादिगति नाही पावै है । बहुरि अहतदेव निर्ग्रन्थगुरु स्याद्वादरूप मरमागमदया रूपधर्ममे वात्सल्य है सो ससार परिभ्रमणका नाशकरि निर्माणरू प्राप्त करै है तथा वात्सल्यतैही जिनमन्दिरका वैयाधृत्य जिनसिद्धान्तका सेवन साधमीनि का सेवन साधमीनिका वैयाधृत्य तथा धर्ममे अनुराग दान देनेमे प्रीति ये समस्तगुण वात्सल्यते हो होय है जे पटकायके जीवनिर्म वात्सल्य किया है ते ही त्रैलोक्यमे अतिशय रूप तीर्थकर प्रकृति को उपाजन करै है यातें जे कल्याणके इक्षर हैं ते भगवान् जिनैन्द्रका उपदेश्या वात्सल्यगुणको महिमा जानि षोडशमा अङ्ग जो वात्सल्य ताका स्तवनकरि पूजनकरि याका महान अर्थ उतारण करै सो दर्शनको विशुद्धता पाय बहुरि तप उच्चारणकरि ब्रह्मिन्द्रादि देवलोककू प्राप्त होय फिरि जगतका उद्धारक तीर्थकर होय निर्माणरू प्राप्त होय है । षोडश कारण धर्मका महिमा अचिन्त्य है जातें त्रैलोक्यमे आश्चर्यकारी अनुपम विभव के धारक तीर्थकर होय हैं, ऐसे षोडश भावनाका वर्णन किया है ॥१६॥

अब धर्मका स्वरूप दश लक्षण है इन दश चिन्हनिकरि अन्तर्गतधर्म जानिये है । उत्तमक्षमा, उत्तममादय, उत्तमआजव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसयम, उत्तमत्याग, उत्तमआदि-



चन्य, उत्तमप्रकार्य वे दशधर्मक न्यून है। जति धर्म तो वस्तुका स्वभावदाह कहिये है लोकमें नेन पदार्थ है तितने अपने स्वभाव कदाचित नाही छाडे है। जो स्वभावका नाश हो जाय तो वस्तु अभाव होय नाही अमानाश वस्तुका स्वभाव क्षमास्वरूप है अर प्राधान्यिक धर्मवन्तित उपाधि है आचरण है ब्रोध नाम धर्मका अभाव होय तदि क्षमा नाम आत्माका स्वभाव स्वयम् रहै है एमही मानना अभावत शोधगुण इत्यादिक आत्माके गुण है त धर्मके अभावत स्वयम् प्रगट होय है तात ये उत्तमस्वमादिक आत्मना स्वभाव है मोहनीय धर्मके अभावत स्वयम् प्रगट होय है तात ये उत्तमस्वमादिक आत्मा का स्वभाव है मोहनीय रूक मे रूपादिक कयापनिकरि अनादिका अच्छादित होय रहै । कयापके अभावत क्षमादिक स्वामानिक अस्माका गुण उघडे है ।

अर उत्तमस्वमागुणरू धर्मेन घर है प्राध धैरीका जीतना हो उत्तमस्वमा है कर्मके है काय धैरी इम जोरके निगम करने का स्थान जे मयमभाव निराकृतताभाव तात देग्ध करनेरू अपि समान मयमदर्शनादिकरू अन्तना मण्डाररू देग्ध करै है यशरू नष्ट करै है अपयशस्वरूपमालिमारू बघार है धमे अरमका विचार नष्ट होय जाय है प्राधोके अपना मन ररने काय आपके यश नाहीं रहे है । बहुत कालरूकी प्रीतिरू धेणमात्रमे निगाडि महान धैर उत्तमस्वमा है ब्रोधरूप रासके बर होय सो असत्य बचन लोकनिन्द्य मोल चाडालादिकनिके बालने योग्य बचन

चाले है। क्रोधो समस्त धर्म लोप है क्रोधो होय तब पिताने  
 मारि नाख माताक पुत्र स्याक बालक मित्र मारि प्राण  
 रहित करै है। अर तोन काधा आपका ह निषे शस्त्रत मरण  
 करै है ऊचै मरान तथा परतादिकत पतन करै है वृषमै पडै है  
 काधीको कोऊ प्रकार प्रतीत नाहो जाननी। क्रोधो है सो  
 यमराज तुल्य है क्रोधो हाय सा प्रथम तो अपेना ज्ञानदर्शन  
 क्षमादिक गुणनिक घातै पीछे क्रमके वशतै अन्यथा घात होय  
 क्रोधके प्रभावत महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मत अष्ट होय नरक  
 गये हैं। यो क्रोध है सो दाऊ शोककानाश करै है महा पापबन्ध  
 कराप नरक पहु जायै है बुद्धि अष्ट करै है निर्दयी करदे है अन्य  
 कृत उपकारक भुलाय कृत न करै है तातै क्रोधममान पाप नाहीं  
 इमराकमै काधादिरुपाय समान अपना घात करनेवाला अन्य  
 नाहीं है जा लारमै पुन्यगान है महाभाग्य है जिनका दोऊ लोक  
 सुधरना है तिनहीके क्षमा नाम गुण प्रकट होयै है क्षमा जो पृथ्वी  
 ताको उर्धो महनेको स्वभाव होय सो क्षमा है अर सम्यक् स्वपर-  
 क समझकरि जा अममर्थ नकरि क्रिया है उपद्रवनिक आप  
 समर्थ हाय करके रागद्वेष रहित हानेक कथा है। उत्तम क्षमा  
 त्रैलोक्यमें मार है उत्तम क्षमा मेमत्त समुद्रतै तारनेवाली है उत्तम  
 क्षमा है सो रत्नत्रयक धारण करनेवाली है उत्तम क्षमा दुर्गतिके  
 दुष्टानिके हरनेवाली है जाके क्षमा हीये ताके नरक अर त्रियेच  
 दोऊ गतिनमै गमन नाहो होय है उत्तम क्षमाका लार अनेक  
 गुणनिके दाय है सुतोभरनेक ता अति

उत्तम क्षमा है उत्तम क्षमाका लाभक जानोजन चिन्तामणिरत्न माने है अर उत्तम क्षमाकी मनकी उज्ज्वलता करे है क्षमा गुण- बिना मनकी उज्ज्वलता और स्थिरता कदाचित्ही नहीं होय है वाचित सिद्ध करनेवाली एक क्षमा ही है । इहां क्रोधके जीतने की भावना ऐसी जाननी— कोऊ आपक दुर्वचनादि करि दु खित करे गाली दे चोर कहै अन्यायी पापो दुराचारी दुष्ट नीच या दोगलो चाडाल पापी कृतघ्नी ऐसे अनेक दुर्वचन करे ता क्षानो ऐसी भावना कर जो याका मैं अपराध किया मे कि नाहो किया है । जो मैं याका अपराध किया तथा रागद्वेष मोहका यशत कोई बात करि दुखाया है तदि तो मैं अपराधी ह मोह गाली देना धिक्कार देना नीच चोर कपटी अधर्मी कहना न्याय है । मोह हम मित्राय भी दण्ड देना सो भी ठीक है मैं अपराध किया ह मोह गाली सुनि रोष नाही करना हा उचित है । अपराधी से नरकमें दण्ड भोगना पडे है तर्त मेरा निमित्तसू याके दु ख भयां तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै है ऐमा रिचार कार क्लेशित नाहो होय क्षमाही कदे है अर जो दुर्वचन कहनेवाला मद- रुपायी होय तो आप जान क्षमा ग्रहण करावनेक रहै भी कृपाल मैं अज्ञानी प्रमादके बशरा कपायनके बश होय तो आपका चित्तक दुखाया सो अब मैं अपराध माफ कराऊ ह आगाने ऐसा कार्य चक्रकरि नाही करू गा एकवार चकिजाय ताको चक्रक महत्पुरुष काफ करे है अर जो आगले न्याय रहित तीव्र कपायी होय तो बोध अपराध माफ करानेका जाय नाही कोला-

तरमें क्रोध उपजात हुआ पाळे माफ करावे, अर जो आप अपराध  
 नहीं किया अर ईर्ष्याभावसे केवल दुष्टतासे आपको दुर्वचन कहे  
 तथा अनेक दोष लगावे तो ज्ञानी किंचित्मक्लेश नाही करे ऐसा  
 विचारे जो मैं याका धन हन्य हो तथा जमी, जायगा खोमी  
 होय तथा याकी जीरिका, पिगाडी होय चुगली, खाई होय  
 तथा याका दोष कहणादि करके जो मैं अपराध किया होय तो  
 मोकू पश्चात्ताप करना उचित है अर जो मैं अपराध नहीं किया  
 तदि मोकू कुछ फिकर नाहीं करना ये दुर्वचन कहे है सो नामकू  
 कहे है सो नाम मेरा स्वरूप नाहो मैं तो जायकू हू जाकू - कहे  
 सो मैं नाही - मैं हू ताकू वचन पहुँचे नाही तर्त-मोकू क्षमा  
 ग्रहण करना ही श्रेष्ठ है । वरि जो ये दुर्वचन कहे है सो सुख-  
 याका, अभिप्राय याका जिह्वा दत्त ओष्ठ याका अर शब्द, अर  
 पुद्गल याका परिणामनिकरि शब्द उपज्या ताका श्रवणकरि मैं-  
 जो विकारको प्राप्त होऊँ तोया मेरी बड़ी अज्ञानता है वरि जो  
 ईर्ष्याना, दुष्ट पुरुष मेरे गाली देवे सो स्वभाव करि देखिए तो  
 गाली कुछ वस्तु ही नाहीं है मेरे कही हू गाली लगे नाहीं  
 दीये है अवन्तुमें देने लेनेका व्यवहार ज्ञानी होय सो कैसे  
 मरुल्य करे - वरि जो मोकू चोर कहे अन्यायी कपटी अधर्मी  
 इत्यादिक कहे तहाँ ऐसा चिन्तन करे ७१ है आत्मन ! - तू  
 अनेक द्वार चोर हुआ अनेक जन्ममें व्यभिचारी, ज्वारी, अमन्य  
 मधी, भील, चाडाल, चमार, गोला, बदा, बूकल, शूकर, गाथा  
 त्यादिक तिर्यच तथा अधर्मी, पापी, कुतन्नी होय आया

अर समारम भ्रमण करता अनेक बार होऊगा अर तो बूकर शुकुर  
 चोर चाडाल कहे तब भ्रमण करि ताबू कहे शिंत होना बडा  
 अनर्थ है अथवा ये दुष्ट जन दुर्बजन कहे हैं सो याको अपराध  
 नाही हमारा बांध्या पूर जन्मकृत कर्मका उदय है सो याके  
 दुर्बजन कहनेके दुगारकरि हमारे कर्मको निर्जरा होय है स  
 हमारे बडा लाभ है इनका यह ह उपकार है जो दुर्बजन कहनेवाले  
 अपना पूर्ण सा समूहका तो दोष कहने करि नाश करे हैं अर  
 मेरे किये पापक दूरि करे हैं ऐसे उपकारीत जो मैं रोप करू तो  
 भी समान कोउ अधम नाही है । बहुति या ता मोक दुर्बजन  
 ही कहा है माछा ता नाही रोपकरि मारने लगि जाय है क्रोधो  
 यो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिकक मारे है सो मोक माछा  
 नाही गयो भी लाभ है अर जो दुष्ट आह मारे तो ऐसा विचार  
 जो मोक मार्या ही प्रमाण रहित तो नाही किया दुष्ट तो  
 अपना मरण नाही गिन करके भी अन्यक मारे है यो भी मेरे  
 काम है । अर जो प्राण रहित करे तो ऐसा निचार एकबार  
 मारणा ही छो कर्मका ऋण चुकयो । हम इहा ही कर्मके ऋण  
 रहित भये हमारा धर्ममें तो नाही नष्ट भया । प्राणधारण तो धर्म  
 हीत सफल है ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय हैं मेरा ज्ञान दर्शन  
 समाधि धर्म ये भावप्राण हैं इनका घात क्रोधकरि नही भया  
 हम समान मेरे लाभ नाही है । बहुति जो कल्याणरूप कार्य है  
 तिनमें अनेक विघ्न आवै ही हैं जो मेरे विघ्न आया सो ठीक ही  
 है । मैं तो अर मममायके आश्रय करू अर जो उपद्रव आवते हैं

क्षमा। छोंडि विकारक; प्राप्त दूगा तो मे-कू-देखि अन्य, मदजाना  
 तया कायर-व्यापी, तपस्यो, धर्म तै, शिथिल हो जायगे तो मेरा  
 जन्म, केवल-अन्यके केशके अर्थ हो भया तथा, मैं, वीतरागधर्म  
 धारण करकै-हू क्रोधी, विकारा-दुर्गचनी, होऊ तो मा-कू-देखि  
 क्रोधमे अर्पने लगिजाय, तडि, धर्मकी भयादा, भगवति पापकी  
 परिपाटी चलानेवाला, मैं हो, प्रघात भया, तातै क्षमागुणा प्राण  
 जाते-हू धन अभिमान नष्ट होने-हू, मे-कू-छाँडना उचित नही  
 बहुरि-पूर्वमेही अशुभ-कर्म उपजाया ताका फल मैं ही, भोगू गा  
 अन्य जे-जन है तेता निमित्तमात्र है इनके निमित्त-तै, पाप उदय  
 नाहीं आता तो अन्यके निमित्ततै आता । -उदयमें, आया-कर्म  
 तो फल दिये बिना टलता, नाहीं बहुरि ये लौकिक अज्ञानी मेरे  
 बिषे क्रोधित होय दुर्गचनादिक करि उपद्रव करै हैं, अर जा, मैं  
 भी यातै दुर्गचनादि करि उत्तर, करू तो मैं तत्त्वज्ञानी अर ये  
 अज्ञानी दाऊ ममान भया-हमारा तत्त्वज्ञानीपना-निरर्थक-भया  
 न्यायमार्गतै उदयमे-आया, मेरा, पापकर्म ता- सन्मुख हीते कौन  
 बिषेकी अपना आत्माई, काधादिकनिके वश करै । मे-आत्मन्  
 पूर्ण बाँध्या जो अमाताकर्म ताका अब उदय-आया ता-कू, इलाज  
 रहित अराकचानि करकै-समभारनितै-सहो, जो क्लेशित होय  
 भोगोगे तो आमाता-कू-तो, भोगोहागे अर नरीन सहित-असाताका  
 बंध और करोगे तातै होनहार दुःखतै निश्चित होय समभारतै  
 हो, मढो ये दुष्टजन बहूत है अपना सामर्थ्य-करकै-मेरे-रूपरूप  
 अधिक करि मेरा समभाररूप सम्पादकक

चाहें हैं अब यहाँ जो आमापधान होय क्षमाकृ छाड़ो घोंगा तो  
अवश्य ही माग्गभाव नष्ट करै धर्म अर अपयशका नाश करने  
पाँला होय जाऊगा तातें दुष्टनिका मसर्गमे मापधान रहना उचित  
है । जानो मनुष्य तो नाहीं सदा जाय ऐमा 'बलेशू', उदन्न  
होने हू पूर्वकर्मका नाश होना नानि हर्षित ही होय है जो बचन  
कटकनिरि घेच्या जो मैं क्षमा छोड़ूंगा तो। क्रोधा और मैं  
समान भयो अर जो घेरी नाना प्रकारका दुर्वचन मारण पीडन  
करके मरा इलाज नहीं करै तो मैं सचय किये अशुभकर्म तिनतें  
कैसे छूटता तातें घेरी हू हमारा उपकार ही किया है अथवा तातें  
जिवेकी होय जो जिन आगमके प्रमादतें अभ्यास किया, ताके  
परीक्षा लेनकू ये बैरीरूप परीक्षा स्थान प्रगट भयो हू सो मेरे  
भारनिकी परीक्षा करनेके ही कर्म उदय भये हू जो समभावकी  
मर्यादाकू भेद करि जो मैं बैरिनिमें रोष करू । तो ज्ञाननेत्रकी  
भारक हू मैं समभावकू नाही प्राप्त होय क्रोधरूप अग्निमे । भस्म  
होय जाऊ । मैं बीतरागके मार्गमे प्रवर्तन करनेवाला ससारकी  
स्थिति छेदनेमैं उद्यमी अर मेरा ही चित्त जो द्रोहकू प्राप्त हो  
जाय तो ससारके मगमें प्रवर्तते मिथ्यादृष्टीनिके समान मूह  
भयो अर जो दुष्टनिके न्याय धर्मरूप मार्ग समझाया अर क्षमा  
ग्रहण कराया जो नाही समझै अर क्षमा ग्रहण न करै तो जानो-  
जन बोझ रोष नाहो करै । जैसे बिप दूरि करनेकू अनेक औपधादि  
देय बिप दूरि कख्या चाहे अर राका जहर दूरि नाहीं होय तो बंध  
जहर नाही खाय है जो ग्याका बिप दूर नाही भयो तो मैं

हू विष भक्षणकरि करू ऐमा न्याय नाहो है तैस जनीजनहु दुष्ट  
 बनकी पहली दुष्टताकी जाति पिछानै जो ये दुष्टता छाँडेगा,  
 चा अत्रिक दुष्टता धरेगा ऐमा विचार जा विपरित परमाणता  
 देखितकू तो उपदेश ही नाही देना अर कुछ समझने लायक  
 योग्यता दीसै तो न्याय वचन हितमितरूप कहना अर दुष्टता  
 नाही छाडै तो आप क्रोधी नाही होना जो ये मोक्ष दुर्वचनादि  
 उपद्रवकरि, नाहीं कपायमान करे तो मे उपशम भावकरि धर्मका,  
 शरणा क्रमै ग्रहण करता तातै मोक्ष पीडा कग्नेवाला हू पापतै  
 मयमोक्ष करि धर्मसू सम्बन्ध कराया हैं तातै पीडा करनेवाला  
 है मेरा प्रमादीपना छुडाय चडा उपकार किया है । बहुरि जगतमें  
 केवल उरकारी तो ऐसे हैं जो अन्यजनके दुख होनेके निमित्त  
 अपना शरीरकू छाडै हैं अर घनकू छाडै हैं तो मेरे दुर्वचन  
 वचनादिक सहनेमै कहा जायगा मोक्ष दुर्वचन कहे ही अन्यके  
 सुख हो जाय तो मेरे क्या हानि है । बहुरि जो अपनेकू पीडा  
 करनेवालेतै रोष करू तो वैरीके पुण्यका नाश होय है अर मेरे  
 अन्तर्गत हितको मिद्धि होय है अर पीडा करनेवालेतै रोष करू  
 तो मेरा आत्मोका हितका नाम होय दुर्गति होय यातै प्राणनिका  
 नाश होवे हू दुष्टनिग्रह क्षमा करना ही एक हित सन्पुष्ट कहै है  
 तातै आत्मकल्याणकी सिद्धिके अर्थक्षमा ही ग्रहण करू, अथवा  
 दुष्टनिकरि दुर्वचननादिक पीडा करनेतै, मेरे जो क्षमा पूगट भई है  
 जो मैं इतना कालतै वीतरागका धर्म, धारण किया सो अब क्रोध  
 चादिकके निमित्ततै साम्यभाव रखा ऐसी परीक्षा करू । बहुरि



सोई, साम्प्रमान प्रसमा योग्य है अर सोही 'रुन्याणरोका' कारण  
 है जो मग्नेके इच्छा निर्दयीनिकरि मलीन नाही किया गया।  
 बहुरि चिरकालत अग्याम किया शास्त्र करके अर स्वभाव धरके  
 कहा साध्य है जो प्रयोजन पद्य व्यर्थ हो जाय है धर्म बोही  
 प्रशमा योग्य है जो दुष्टनिके रुचनादि हाने नाही छूटै रह रहे  
 वपद्रव आये बिना तो समस्तजन सेत्य शौच धर्माके धारक बन  
 रहे हैं जैमै - चन्दन वृक्ष काट तो हू कदाडेरा सुगन्ध  
 सुगन्ध ही करै - तैम जाकी प्रश्रुति होय सोही - सिद्धि प्राप्त  
 है। - बहुरि अन्यरि किया उपमर्ग तिनरि जाका रिक्त  
 वलुपित नाही होय सो अग्निशो सम्पदाक प्राप्त होय है।  
 अनानो हैं ते अपने भागनिकरि पूर्य किया पापकर्म ताक अर्थ  
 तो नाहो राख कर अर जो कर्मक फल देनेके साधनिमित्त साध  
 करे हैं जिन कर्मका नाशते मेरा समारम्भ सताप नष्ट हो। जाय  
 सो कर्म हमेश होयगा तो मेरे बाधित सिद्ध मया। बहुरि या  
 समारम्भ बन अनन्त सकलेशनि करि मर्या है - हममे बसनेवाला  
 के नाना प्रकारके दुख नाही महने योग्य है। कहा, ? - मसारम  
 यो दुख ही हैं शो हम ममारम सत्यग्यान विवेकरि रहित अर  
 जिन सिद्धान्ततें द्रष्टे करनेवाले अर महानिर्दयी अर परलोका  
 हितके अर्थ जिनके बुद्धिनाही अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्वलित  
 अर दुष्टताकरि सहित निषयनिकरि लोलपताकरि अन्ध हिठग्राही  
 महा अभिमानी कृत्तनो ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्ज्वल  
 के धारक सत्पुरुष अतः तप सपञ्चरणकरि मोक्षके अर्थ

उद्यम कैसे करते हैं? ऐसे क्रोधी दुर्वचनके बोलनेहारें हठग्राही  
 अन्यायनर्गोनिनी अधिकृता देखि कम्पेकी सत्पुत्र्य भीतरागी  
 मये हैं अर जा मैं बड़े पुण्यके प्रमादमें परमात्माके स्वरूपका  
 माता भयो अर मूर्खजनकरि उपदेश्या पदार्थनिकृ हूँ जो क्रोधके  
 धमः दूगो तो मेरा ज्ञान चारित्र्य समस्त निष्फल होयगा अर धर्म  
 का अपयश करावनजारा होय दुर्गतिका पात्र हूँगा । बहुरि और  
 हूँ पद्मनदमुनि कहे हैं जो मूर्खजनकरि बाधा पीडा अर क्रोधके  
 बचन और हास्या अर अपमानादिक होते हूँ जो उत्तम पुत्र्यनि  
 का मन प्रिकारक प्राप्त होय ताकू उत्तम धर्मा कहिये हैं । सो  
 धर्मा मोक्षमार्गमें प्रवृत्तते पुत्र्यके परम सहायताकू प्राप्त होय है ।  
 विवेकी चिंतन करैं हैं हम तो रागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वल  
 मनकरि तिष्ठत अन्यलोक हमकू खोटा कहो तथा भलो कहो  
 हमकू कहा प्रयोजन है । भीतरागधर्मके धारकनिकू तो अपने  
 आत्माका शुद्धपना माधने योग्य है जो हमारा परिणाम दोष  
 रहित है अर कोऊ हित हमकू मला कहे तो मला नहीं हो  
 जायगे अर हमारा परिणाम दोषरहित है अर कोऊ हमकू बैरबुद्धि  
 तैं खोटा कहे तो हम खोटा नहीं हो जायगे फल ता अपनी  
 जैसी चेष्टा आचरण होयगा तैसा प्राप्त होयगा जै से कोऊ  
 काचक रत्न कह दिया अर रत्नकू काच कह दिया तो हूँ मोल  
 तो रत्नकाही पावेगा काचखण्डका बहुत धन कौन देवै । बहुरि  
 दुष्टजन हैं ताँका तो स्वभाव परके दोष कहां हूँ नहीं होय तो हूँ  
 परके दोष कहे बिना सुखकू प्राप्त नहीं होय ताँकें :

निर्दयी ही होय है, मार्दवगुण समस्त कहे दित करने वाला है । जिनके मार्दवधर्मके प्रसादतः चित्तरूप भूमिमें कर्णारूप बेल नगीन फैले है मार्दवकरके ही - जिनेन्द्रमगनमें तपो शास्त्रानिमें भक्तिका प्रकाश होइ है मद - सहितके जिनेन्द्रके गुणनिम अनुराग नाहीं होय है मार्दवगुणकरि कुमतिवान के प्रमारका नाश होय है कुमति नाहीं फैले है अभिमानीके अनक कुवृद्धि उपजै है । मार्दवगुणकरि घडा निम पूरत है मार्दव करके बहुत कालका बरो हूँ बर छाडै है मान घट तदि परिणामनिकी उज्जलता होय कोयल परिणाम करके ही दाऊ लोकरको प्पिद्धि होय कोमलपरिणामीक इम लोकमें सुयम होय है परलोकमें दुलोकको प्राप्ति होय है कोमल परिणाम करिके हो अन्तरङ्ग बहिरग तपभूषित होय है अभिमानोका तप हूँ नि दवे योग्य है कोमलपरिणामोतै तीन जगत लोकनिका मन रजायमान होय है मार्दव करके ही जिनेन्द्रका शायन जानिये है मार्दव करके अपना परका स्वरूपका अनुमान करिये है कठोर परिणामीके आपा परका निवेक नाहीं होय है मादव करके ही - समस्त दापनिका नाश होय है मार्दवपरिणाम समारसमुद्रतै पार करै है । यातै मार्दवपरिणामक सम्यग्दर्शन अग जानि निर्मल मार्दवधर्मका स्तवन करो । समारी जीवनि ते अनादिकालका - मिथ्यादर्शनका - उदय राहा है ताका उदयरि पयायवुद्धि हुआ जातिकू, कुलकू, - निदाकू, बरकू,

तपकू, धनकू, अपना स्वरूप मानि

। । ठाकू ये मान नाहों है जो कू



समस्त निन्दा कर रहे हैं। अभिमानीका ममस्व लोक-पवन होना  
 चाहे स्वामी हूँ अभिमानी सेवक हूँ, त्यागे हैं अभिमानी हूँ। गुरुजन  
 प्रिया देने, उपाह, रहित होय हैं अपना सेवक परागमुख हो।  
 जाय मित्र, भाई, हित, पदोमी, याका पतनही। चाहें पिता  
 गुरु उपाधायतो पुत्र हूँ विनयन्त देख करिही आनन्दित होय  
 हैं। अविनयी अभिमानी पुत्र वाशिष्य बड़े-पुत्रप्राप्तके कनहूँ  
 सतातित करे हैं जाते पुत्रका तथा शिष्यका तथा सेवकका तो  
 ये ही धर्म हैं जो नवीम कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वा-  
 मी हूँ जनायकरि करे आत्मा मागि करे तथा आत्माको अन्तर  
 नहीं मिले तो अन्तर देखि शीघ्रही जनावे योही विनय हैं  
 योही भक्ति है जाके मस्तकउपरि गुरु विराजते धन्यभाग हैं  
 विनयन्त रहित पुरुष है तो समस्त कार्य गुरुनिके जनाय दे हैं  
 जो हम फलिकालमें मदरहित कोमल परिणाम करि समस्तलोकम  
 प्रवर्त हैं। उत्तम पुरुष है तो बालकमेनिर्घनम रोगीनिमे बुद्धिरहित  
 मूर्खनिमे तथा जाति कुलादिहिनम हूँ यथा योऽन्य प्रियवचन आदर  
 सत्कार स्थानदान कदाचित नाहो चरे हैं प्रियवचन ही कहें उत्तम  
 पुत्र उद्धतताका वस्त्र आभरण नहीं पहरे ऊद्धतपणाका परके  
 अपमानका कारण देनलेन प्रियादि व्यवहार कार्य नहीं करे हैं  
 उद्धत होय अभिमानीपनाका चालना बैठना, शारुना, दूरहीते  
 छाडे ताके लोकम पुन्य मार्गवगुण हैं। धमपायना, रूपपायना,  
 कानिपायना, प्रियामालचतुराईपायना, बलपायना, जातकुलादिउत्तम  
 गुण भगत्मान्यता पायना, धिनका सफल हैं जो ऊद्धतता रहित

अभिमानरहित नम्रतासहित विनय सहित प्रवर्तें, है अपने मनमें आपकू सबतें लघु मानता कर्मके परमेश जाने हैं सो कैसे नाहो करे हैं । - भव्यजन हो सम्यग्दर्शनका अग इस मार्ग अगकू जानि चित्तके विषे ध्यान करो । ऐमें मार्गवधर्मका वर्णन कियो ॥२॥

अब आर्जवधर्मकू वर्णन करैं हैं—धर्मका अष्ट लक्षण आर्जव नाम सरलताका है मन वचनकायको कुटिलता अमान सो आर्जव है । आर्जन धर्म है सो पापका खण्डन करनेवाला है और सुख उपजानेवाला है । तारैं कुटिलता छाडि कर्मका भय करनेवाला आर्जवधर्म धारण करो । कुटिलता है सो अशुभ कर्मका रन्ध करनेवाली है जगतमें अतिनिन्द्य है यात आत्मका हितका इच्छनिकू आर्जवधर्मका अवलम्बन करना उचित है । जैसा आपका चित्तमें चिन्तन करिये तैसा ही अन्यकू कहना अर तैसा ही वाद्यकायकरि प्रवर्तन करिये सो सुखका सचय करने वाला आर्जवधर्म कहिये है । मायाचारूप शल्य मनतैं निकालो उज्ज्वल पवित्र आर्जवधर्मका निचार करो मायाचारीका व्रत तप समय ममस्त निरर्थक है आर्जवधर्म निर्माणके मागका सदाई है जहा कुटिलचन नाहीं बोले तहा आर्जवधर्म प्राप्त होय है । ये आर्जवधर्म है सो दर्शनज्ञानचारिको अखण्ड स्वरूप है अतीन्द्रिय सुखका पिटारा है आर्जवधर्मका अमानकरि अतीन्द्रिय अविनाशी सुखकू प्राप्त होय है मसाररूप समुद्रके तरनेकू जहाजरूप आर्जव

हो है । मायाचार जान्या जाय तदि प्रीतिका भंग होय है ।  
 ज से काजीतें दुग्ध फटि जाय है अर मायाचारी अपना कपटक  
 बहुत छिपावते हू प्रगट हुये मिना नाहीं रहे है । पापीजीवन  
 की चुगली करे वा दास प्रकाश ते आपही प्रगट हो जाय है  
 मायाचार करना है सो अपनी प्रतीतका निगाडना है धर्म बिगा-  
 डना है मायाचारीका समस्त हितमिना कियेनरो होय है प्रतीहोय  
 त्यागी तपस्वी होय अर जाका कपट एकरा कियेहु प्रगटहा जाय  
 ताक समस्तलोक अधर्मीमानि कोऊ प्रतीत नाहीं करे है कपटी  
 की माता हू प्रतीत नाही कर है कपटी तो मित्रोही श्यामीद्रोही  
 वर्मद्रोही कुतभी है अर यो त्रिनेन्द्रको धर्म तो कपटरहित छल  
 रहित है ज से धार। ध्यानमें सुधा गडगं प्रवेश नाहीं करे तसें  
 कपटकरि चक्रपरिणामोका हृदयमें त्रिनेन्द्रका आर्जन कहिये मरल  
 धर्म प्रवेश नाही कर सके है । कपटीका दोउन्मेष नष्ट हो  
 जाय है याते जो यश चाहोहो धर्म चाहोहो प्रतीत चाहो हो तो  
 मायाचारका त्यागकरि आर्जनधर्म धारण करो कपटरहितकी पैरी  
 हू प्रशमा करे है कपटरहित सरलचित्त जो अपराध भी किये  
 होय तो दण्ड देने योग्य नाही होय है आर्जन धर्मका धारक तो  
 परमात्माका अनुभवनमें मग्न कर है श्याय । जीतनेका सतोष  
 धारनेका सकृप कर है जगत्के छत्रनिका दूरीतें परितार करे  
 आमाक अमहाय चैतन्यमान जागै है जो धनमम्पदा कुटुम्बा-  
 दिकहु जेना सो ही कपट छलकरि ठिगाई करे ताते जो  
 आत्माक समार परिभ्रमणत छुटाय परद्रव्यनिर्ते आपहु भिन्न

असहाय जाने सो घनजीवितव्यके अर्थ कष्ट कटाचित् नाही करै तर्तें जो आत्माकू समार परिभ्रमणतें छुडाय चाहो तो माया चारका परिहारकरि अर्जधर्म धारण करो ॥ ऐसैं अर्जधर्मका वर्णन किया ॥३॥

अब सत्यधर्मका वर्णन करै हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है यो सत्यवचन दयाधर्मको अब मूल कारण है अनेक दोषनिका निराकरण करनेवाला है इस भयमें तथा परभवमें सुख करनेवाला है समस्तके विश्वास करनेका कारण है समस्तधर्मके मध्य सत्यवचन प्रधान है सत्य है जो ससार समुद्रके पारउतरनेकू जहाज है समस्त विधाननिमें सत्य है सो बड़ा विधान है समस्त सुखका कारण सत्य ही है सत्यत ही मनुष्यजन्मभूषित होय है सत्य करके समस्त पुण्यकर्म उज्जल होय है जो पुण्यके ऊँचे कार्य करिये हैं तिनको उज्जलता सत्य विना नाहीं होय है सत्य करि समस्त गुणनिका समूह मझिमाकू प्राप्त होय ह सत्यका प्रभावकरि देव हैं ते सेवा करै हैं सत्यकरके हो अणुव्रत महान्व्रत होय है सत्यविना व्रत समय नष्ट हो जाय है सत्यकरि समस्त आपदाको नाश होय है यार्तें जो वचन बोले सो अपना परका हितरूप कहो प्रमाणोकू कडा फोऊकै दु ख उपजै ऐमावचन मति कहो गररहित कहा, परमात्माके अस्तित्व कहनेवाला वचन कहो नास्तिकनिके वचन पापपुण्यका स्वर्गनरकका, अभाव कहनेवाला मति कहा यहा ऐमा परमाणमकू उपदेश जानना जो जीव



अनन्तानन्तकाल तो निगोदमें ही रखा तहा वचनरूप कर्मवर्गणा ग्रहण नहीं करी क्योंकि पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इनके मध्य अनन्तकाल असरयातकाल असरयात काल रक्षो तहां तो जिह्वा इन्द्रियही नाही पाई बोलनेकी शक्ति ही नाही पाई अर जो विरल चतुष्पदमें उपज्या तथा पंचेन्द्रिय तिर्यचनमें उपज्या तहा जिह्वा इन्द्रिय पाई तो 'हृ' अक्षरस्वरूप शब्द उच्चारण करनेको सामर्थ्य नाही भया एक मनुष्यपनमें पचन बोलनेकी शक्ति प्रगट होय है। ऐसा दुर्लभवचनको अमत्य बोलि बिगाडि देना सो बडा अनर्थ है मनुष्यजन्मकी महिमा तो एक वचनहीते है नेत्र कर्ण जिह्वा नासिका तो डोर तिर्यचके हू होय है खापना पापना भोगादिक पुण्य पापके अनु- ढागनिहू हू प्राप्त होय है आभरण वस्त्रादिक कृकरा सिंह बानरा, गधा, घोडा, ऊट, बलघ इत्यादिकनिको हू मिले हू परन्तु पचन कहनेका शक्ति श्रवण करनेकी शक्ति तथा उत्तर देनेकी शक्ति तथा पढने पढानेका कारण उचन तो मनुष्यजन्ममें ही है और मनुष्यजन्म पाय जो वचन बिगाडि दिया सो समस्तजन्म बिगाडि दिया। बहुरि मनुष्यजन्ममें जो लेना देना कहना सुनना धीज प्रतात धर्मकर्म ग्रीतबैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप और निवृत्तरूप कार्य है ते उचनके आधीन है अर वचनकू हो दूषित कर दिया। तदि समस्त मनुष्य जन्मका व्यवहार बिगाडि दूषित कर दिया। तर्ते प्राण जाते हू अपना वचनकू दूषित मत करो। बहुरि परमागममें कहा जो च्यारप्रकारका अमत्तवचन ताका त्याग

करे जो विद्यमान अर्थका निषेध करना सो प्रथम अमृत्य मे जसे कर्मभूमिका मनुष्य तिर्यचका अकाल मृत्यु नाहो होय ऐसा वचन अमृत्य है जाते देनारको तथा भोगभूमिका मनुष्य तिर्यचका तो आयुकी स्थिति पूर्ण भया हो मरण है बीच आयु नाहीं दिय है जितनी स्थिति बाधी तितनो भोग करके ही मरण करे है अर कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यचगनिका आयु है विषय भक्षणकरि तथा ताडन मारण छेदन वधनादिक वेदनाकरि तथा रोग की तीव्र वेदनकरि देहर्त रुधिका नाश हानेकरि तथा दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यच भयकर दक्करि उपज्या भयकरि तथा वज्रपातादिका स्रक्क परचक्रादिक के भयकरि तथा शस्त्रका घातकरि तथा पवतादिकत पतनकरि तथा अग्नि पवन जल कलह विसत्राटादिकर्त उपज्या क्लेश करि तथा साम उत्सासका धूमादिकर्त रुकनेकरि तथा आहारपाना दिका निरोध करि आयुका नाश होय है आयुकी दार्धस्थिति हू रिपभक्षण रक्तक्षय भय शस्त्रघात सकलेश सासेस्याम निरोधकरि अप्नपानका अभावकरि तत्काल नाशहू प्राप्त होय ही है । केते लोकरु कहै हैं आयु पूरो हुआ बिना मरण नाहो होय ताका उत्तर करे हैं जो बाह्य निमित्तसू - आयु नाहों छिदे तो रिपभक्षणर्त कोन पराग्रह होता, अर रिप - खानेगानेहू - उकाली काहेहू देते अर, शस्त्रवाता करनेवालेर्त काहेहू, भयकरि भागर्त अर सर्प सिंह व्याघ्र हस्तो तथा दुष्ट मनुष्य तिर्यचदिकनिकू - दूरहीर्त काहेहू छाड़ते

पुत्र, कूप, धानडीमें तथा अग्निको

पडते कौन भय करता अर रोगका इलाज काहेक करते ताँते बहुत कहनेकरि रहे 'ओ' आयुघात होनेका वाइराग कारण मिल जाय तो आयुका घात हो जाय यह निश्चय है । बहुति आयु-कर्मकी ज्यो अन्य हू कर्म वाइराग कारण मिले उदय और ही है समस्त जीवनिके पापकर्म पुण्यकर्म सत्तार्थ विद्यमान है वाइय द्रव्य क्षेत्रकाल भागादि परि परिपूर्ण सामग्री मिले कर्म अपना रम देवेही है वाइय निमित्त नाहीं मिले तो उदयम नाहीं और तथा रम दिया विनाही विजरे है बहुति जो असद्भूत हू प्रगट करना सो दूजा असत्य है जस देवनि के अकालमृत्यु कहना देवनि के भोजन ग्रमादिरूप करना कहें वा देवागनाके मनुष्यका कामसेवन इत्यादिक कहना दूजा असत्य है । बहुति मृत्युका स्वरूप हू अन्य निपरीत स्वरूप कहना सो तीसरा असत्य है । बहुति गदित बचन कहना सो चौथा असत्य बचन है । गदित बचन का तीन भेद है गदित, 'साय, अप्रिय । तिनमें पशुन्य, हास्य, कर्कस अममनस, प्रलपित इत्यादिक अन्य हू खरगिरुद्ध बचन है तिनमें जो परके विद्यमान तैथो अविद्यमान दापनिस् पीठ पीछे कहना तथा परका घनका विनाश जीविकाका विनाश प्राणनिका नाश जिस बचनतें हो जाय तैथा जगतम निन्द्य हो जाय अपवाप हो जरय ऐसो बचन कहना सो गदित नाक असत्य बचन है । बहुति हास्य लीया भेदबचन तैथा श्रवण करनेवालेनिके अशुभराग उपजानेवाले बचनसो हास्यनामा गदित बचन है । बहुति अन्यक कहै तू टांडा है तू मूर्ख है अज्ञानी है इत्यादिक कर्कश बचन है ॥

बहुरि प्रयोजन रहित धीठपनात बरुगड करनासे प्रलपित उचन  
 है । बहुरि जिस उचनकरि प्राणानिका घात हो जाय दशमै उप-  
 द्रव हो जाय देश लुटि जाय तथा देशके, स्वामीनिर्गु मदारै  
 होजाय तथा ग्राममै अग्निलगि जाय घरनल जाय वनमै अग्नि लगि  
 जाय तथा कह निमगद युद्ध प्रगट हो जाय तथा विपाद  
 करि मरिजाय तथा मारिजाय तथा वैर उन्ध जाय तथा  
 छहकायके जीवनिके घातका प्रारम्भ हो जाय महाहिंसामै प्रवृत्ति  
 हो जाय सो सामर्थ्य उचन है तथा पररू चार कहना व्यभिचारी  
 कहना सो ममस्त सामर्थ्य-वचन दुर्गतिके कारण त्यागने योग्य  
 है अथ अपिय उचन त्यागने योग्य पाण जाते हू नाही कहना  
 अपीय उचनके भेद ऐसे जानने—ऊर्ध्वसा, कटुका, पुरुषो, निष्ठुरा  
 परकोपनी, मध्यकृपा, अभिमानो, अनयस्त्री, छेदकरी, भूतनाथकरी  
 ये महापापके करनेवाली महानिन्द्य दश भाशा मत्स्यादी त्याग  
 करै हैं । तू मूर्ख है बलद है डारहै रे मूर्ख तू कहा समझे इत्यादिद  
 करैसा भाषा है बहुरि तू कुजाति है नोच जाति है अधर्मी महा  
 पापी है तू स्पर्शन करने योग्य नहीं तेरा मुख देखा बड़ा अनय  
 इत्यादिक मर्म उद्देश करनेवाला कटुका भाषा है तू आचार्यष्ट  
 है, अष्टाचारी है महा दुष्ट हैं इत्यादिक मर्म छेदनेवाली परुषा-  
 भाषा है ताहू १ मारनाखस्यु थारो डाह लगाख्यु थारो मखक  
 काटिख्यु तने खाय जख्यु इत्यादिक निष्ठुरा भाषा हैं । रे निर्ल-  
 अर्णशकर तेरो जातिकूल आचारका नाही तेरो कहा तप त  
 कुशील है हमने योग्य है महानिन्द्य है अमक्ष्य भक्षण करनेवाला

है तरा नाम लिया कुल लज्जित हाथ है इत्यादिक परकीर्णो  
 भाषा है । बहुरि निमःवचनके मुनते ही हाडनिकी शक्ति नष्ट हो  
 जाय सो मध्यकृपा भाषा है । बहुरि लोभनि ३५ अना अपना  
 अनागुण प्रकट करना परके दाप कहना अना कुल जाति रूख  
 प्रकृतिनादिक मद निये जो चरन धोना सो अभिमानाभाषा  
 है । बहुरि शोलप्रण्डन करनेवाली अर विद्वेष करनेवाली अनप  
 करि भाषा है । बहुरि जो घोर्य शोल गुणादिकनिके निर्मूल करने  
 वाली अमत्येदाप प्रगट करनेवाली जगतमें सुडा करक प्रगट  
 करनेवाली छंदरि भाषा है । जिम वचनकरि अशुभ घटनाप्रगट  
 हो जाय या प्राणनिका नाश करनेवाली भूतवचकरि भाषा है । ए  
 वंश प्रकारं नि छ वचन त्यागने योग्य है । बहुरि स्त्रीनिके होय  
 भाव विलाम विभ्रमरूप कोडा व्यवहारादिकनिकी कथा-कामके  
 जगाने वाली व्रजचार्यका नाश करनेवाली स्त्रीनिकी कथा तथा  
 भोजनेषानम राग करारनेवाली भोजनकी कथा तथा रोद्रकर्म  
 करनेवाली राजकथा तथा मिथ्यादृष्टी बुलिंगोनिका कथा तथा  
 भ्रम उपाजन करनेकी कथा तथा बेरोदृष्टनिक तिरस्कार करनेकी  
 कथा तथा हिंसातृ पुष्ट करनेवाली वेद स्मृत पुराणादिक कुशा-  
 स्त्रीनिकी कथा कहने योग्य नाहो श्रवण करने योग्य रापका आश्रय  
 का कारण अग्रिय भाषा त्यागने योग्य है । 'भो ज्ञानोहा ! येघार  
 प्रकारकी' नित्यभाषा हास्यकरि मोघकरि लोभकरि मदकरि मय-  
 करि विद्वेषकरि कदाचित् मति कहो अना परका हितरूपहोवचन  
 चाले इस जीमके जैसा सुख हितरूप अर्थ-सयुक्त मिष्ट वचन करे

हैं निराकुल करे हैं आताप हरै तैया सुखकारी आताप हरनेवाली  
 चन्द्रकातिमणि जल चन्दन मुक्तामालादिक कोऊ पदार्थ नाही है  
 अर जहा अपने बोलनेतैं धर्मको रक्षा होती होय प्राणोनिका उप  
 कार होता होय तहा पिना पूछै, ह बोलना अर जहा आपका अन्य  
 का हित नाही होय तहा मौन सहित ही रहना उचित है । बहुत  
 सत्य उचनतैं सकल विद्या सिद्ध होय है जहा विद्या देनेवाला सत्य  
 वादी होय और सीखनेवाला हू सत्यवादी होय ताके सकल विद्या  
 सिद्ध होय कर्मकी निर्जरा होय सत्यका प्रभावसे अग्निजल, विष  
 सिद्ध, सर्प दुष्ट देव, मनुष्यादिक राधा नाहा कर सके है । सत्य  
 का प्रभावत देवता वशीभूत होय है प्रीति प्रतीत दृढ होय है  
 सत्यवती माताममान विश्वास करने योग्य होय हैं गुरुका ज्यो  
 पूज्य होय हैं मित्रज्यो प्रिय होय है उज्ज्वल यशस् प्राप्त होय है  
 तपमयमादि समस्त सत्यउचनतैं सोई हैं । जैसे विष मिलनेकरि  
 मिष्ट भोजनका नाश होय अन्यायकरि धर्मका यशका नाश होय  
 तैसे अमत्यउचनतैं अहि सादि सकल गुणनिका नाश होय है तथा  
 अमत्य उचनतैं अप्रतीति अकीर्ति अपवाद, अपने वा अन्यके  
 सम्मेल, अरति, कलह वर, शोक, बध, वन्दन, मरण, जिह्वाच्छेद,  
 सर्पस्पर्शहरण, वदी गृहमे प्रवेश, दुर्ध्यान, अपमूर्च्छ, व्रत, तप, शील  
 मयमका नाश, नरकादि दुर्गतिमें गमन, भगवानकी आज्ञाको भग  
 परमागमर्त, परागमुखता घोरपापका आस्त्र द्रव्यादि हजारों दोष  
 प्रगट होय हैं । याति भोजनानोजन हो लोकमें प्रिय हित मधुर वचन  
 बहुत भव्या है सुन्दर चन्दनिकी कमी नाही फिर निन्द्यवचन

को अतिलम्बितता ही परिणामरूप मलीन करनेवाली है। इनको बाछात रहित होय अपने आत्माको समापत्तनत रक्षा करो। आत्माको मलीनता तो जीवहिमात अर परधन परधनीको बाछात है जे परम्परी परधनका इच्छुक अर जीवघातके करनेवाले हैं ते कोटितोर्थनिमै स्नान करो समस्त तीर्थनिकी समस्त पदना करो तथा कोटि दान करो कोटिर्प तप करो समस्त शान्त्रनिका पठन करो तो हू उनके शुद्धता कदाचित नही होय। अमक्ष्य भक्षण करनेवालेनिका अर अन्यायका विषय तथा धनके भोगवालेनिका परिणाम एमे मलीन होय है जो कोटिवार धनका उपद्रव अर समस्त सिद्धान्तनिकी शिक्षा बहुत धर्म श्रवण करते हैं कदाचित हृदयमें प्रवेश नहीं करे है सो देखिये है जिनहू पचास शास्त्र श्रवण करते भये हैं तो हू धर्म का स्वरूपका ज्ञान जिनहू नहीं है सो समस्त अन्याय धन अर अमक्ष्य भक्षणका फल है तातें जो अपने आत्माका शौच चाहे हो तो अन्यायका धन मति ग्रहण करो अर अमक्ष्य भक्षण मति करो परकी स्त्रीकी अभिलाषा मति करो। बहुति परमात्माके ध्यानतें शौच है अहि सा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्यागतें शौचधर्म है। जे पचपापनिमै प्रवर्तनेवाले हैं ते सदाकाल मलीन हैं जे परके उपकारक लोपे हैं ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं जे गुरुद्रोही धर्मद्रोही मित्रद्रोही उपकारक लोपनेवाले

हैं तिनके पापको सताने अमर्याद भवनिमें क्रोधि तीर्षनिमें स्नान करि दानकरि दूर नाहीं होय है पिशासघातो सदीमलीन है यातें भगवानके परमात्मको आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शनज्ञानचारि-  
त्रकरि आत्मोच्छु शुचि करो क्रोधादि कषायका निग्रहकरि उत्तम क्षमदिगुण धारणकरि उज्ज्वल करो समस्त व्यग्रहार कपटरहित उज्ज्वल करो परका विभज ऐश्वर्य उज्ज्वलयश उत्तमविद्यादिक प्रभाज देखि अदेखसका भाररूप मलानता छाडि शौचधर्म अङ्गीकार करो परका पुण्यका उदय देखि त्रिपादो मति होई इम मनुष्यप-  
र्यायक तथा इन्द्रिय ज्ञान बल आयु सपदादिकनन्द अनित्य क्षणभंगुर जानि एकाग्र चित्तकरि अपने स्वरूपमें दृष्टि धारि अशुभ भावनिको प्रभावकरि आत्माच्छु शुचि करी । शौच ही मोक्षका मार्ग है शौच ही मोक्षका दाता है । ऐमं शौच नाम पञ्चधर्मको शर्णन क्रियो ॥ ५ ॥

अब समय नाम धर्मका स्वरूप कहिये है—समयका ऐमा लक्षण जानना जो अहिंसा कहिये हिंसाको त्याग दयारूप रहेगा हितमित पथ्य प्रिय सन्यवचन बोलना परके वनमे चाछा का अभिमान करना कुशीलका छाडना गरिग्रह त्यागना ए पाच व्रत हैं तिनमें पंच 'पापनिका एक देश त्याग से अणुव्रत है सरुद्रत्याग' से महाव्रत है इन पंचव्रतनिक दृष्ट



धारण करना अथवा च समितिका पालना -तिनर्म गमनको शुद्धता ईश्यासमिति है-वचनको शुद्धता, सो, मापाममिति है निरोप शुद्ध भाजन करना सो ऐषगाममिति है, शरीरके उपकरणादिक नेत्रनिते सोधि उठारना धरना, सो आदाननिक्षेपण समिति है मरुमूररुकादिक मरुनिकू अन्य जीवनके ग्लानि दुःख बाधादिक नाहो उपने ऐसे क्षेत्रम क्षेत्रण सो पतिष्ठापना समिति है इन पञ्चम, समितिनिका पालना अर प्राध, मान, माया, लोभ, इन चार कपायनिका निग्रह, करना अर मनवचनभाषको अशुभपट्टि ए दण्ड हैं इनतीन दण्डनिका त्याग अर निषयनिर्म दौडती पचइन्द्रियनिकू रक्ष, करना जीतना से सयम है ।

भावार्थ—पञ्चतनिका कारण, पञ्च समितिका पालन - कपायनिका निग्रह दण्डनिका त्याग इन्द्रियनिका निषयकू जिनेन्द्रके परमागममें सयम कहा है ।, सो सयम बहुत दुर्लभ है जिनके पूर्वके बाधे अशुभकर्मनिका अतिमन्दपना होते मनुष्य जन्म उत्तमदेश, उत्तमकुल, उत्तमजाति, इन्द्रियपरिष्णता नीरोगता कपायनिकी मन्दता होय अर उत्तमसगति, अर जिनेन्द्रका आगमते अतिविरक्तताके धारण मनुष्यके, अप्रत्याख्यानारणकी श्रयापशमते तो दशमयम होय अर जाकू अप्रत्याख्यान अर प्रत्या-

ध्यान, दोऊ कपायनिका क्षयोपशम होय ताके सकल सयम पावना  
 महादुर्लभ है । नरगतिमें तिर्यच गतिमें देवगतिमें तो सयम होय  
 नाही कोऊ तिर्यचके देशत्रत अपनो पर्यायमाफिक कदाचित  
 होय है अरि मनुष्यपर्यायमें भी नीचकुलादिकमें, अधर्मदेशनिमें  
 इन्द्रियनिकल ज्ञानो रोगो दरिद्रो अन्यायमार्गी, निपयानुरागी  
 चासकपायो निन्दकमी मिथ्यादृष्टीनिकै सयम कदाचित नाही  
 होय है ताते अतिदुर्लभ सयमका पावना है ऐसे दुर्लभ सयमक  
 दूपाय कोऊ मूढबुद्धि निपयनिका लेखपी होय छाडे है तो  
 अनन्तकाल जन्म मरण करता मसारमें परिभ्रमण करे है । सयम  
 पाय छाटे सयमक बिगडे है ताते अनन्तकाल नगोडमें परिभ्र-  
 मण त्रसस्थानरनिमें भ्रमण करना होय सुगति नाही होय उच्छ्र-  
 पाय बिगाडने समान अन्य अनर्थ नाही है निपयन्दि केन्द्र  
 होय जा सयमक बिगाडे है सो एक कौडीमें चिन्तन करने  
 है तथा इन्धनके प्रथि कल्पवृक्षकू छेदे है निश्चिन्तन करने  
 सुख नाही सुखभास है क्षणमगुर है, नरकनिन्दे को दूषण  
 कारण है किंकरफल नैमें बिहवाका मर्दनन निश्चिन्तन करने  
 घोर दुःख महादाह मन्ताप देय मगपद निश्चिन्तन करने  
 किंचिमात्र काल ता, अज्ञानी निश्चिन्तन करने निश्चिन्तन करने  
 फिर अनन्तकाल, अनन्तभ्रमनिमें निश्चिन्तन करने निश्चिन्तन करने

की परमरक्षा करा पाँच इन्द्रियकृ शिष्यनिके सम्बन्धते रोकनेते  
 समय होय है कषायनिका खण्डनकरि समय होय है दुस्तरतपका  
 धारणकरि समय होय है रसनिका त्यागकरि समय है मनके  
 प्रमरके रोकनेकरि समय होय है महान कायक्लेशनिके कहने  
 करि समय होय है प्रमस्थायर है । उपजासादिक अनशनतपकरि  
 समय होय है मनर्म परिग्रहको लालमाका रागकरि समय होय  
 है नसस्थायर रक्षा करना सो ही समय है मनके निरुल्पनिके  
 रोकनेकरि तथा प्रमादते पचनको प्रवृत्तिके - रोकनेकरि, समय  
 होय है शरीरके अमउपागसिका प्रवर्तनकू रोकमकरि समय होय  
 है । बहुत गमनके रोकनेकरि समय होय है । बहुरि दयारूप  
 परिणाम करि समय होय है परमार्थका विचार करके तथा पर-  
 मात्माका ध्याम करके समय होय है जहा परिग्रहमे  
 मता मनष्ट होय बाह्यारहित सिष्ठना तथाप्रचड  
 कामना खण्डन करना सो बडा तप है । जहा नम दिगम्बर  
 रूप धारि शीतकी पत्रनका आतापका वर्षाकी तथा डास माछर  
 मक्षिका मधुमक्षिका सष विन्छ इत्यादिकर्त उपजो धोर वेदना  
 कू कोरे अगपरि सहनामो तप है अर जो निर्जनपर्यतनिकी  
 निर्जनगुफानिमे भयकर पर्वतनिके दराडेनिम तथा मिहज्याघ्र  
 रीछ म्पाली चीता हस्तीनिकरि न्याप्त धोरचनमे निघ्रास

करना सो तप है । तथा दुष्ट बैरी म्लेक्ष चोर शिकारी मनुष्य और दुष्टव्यतरादिक देवनिकृतघोर उपसर्गनिर्त कपायमान नहीं हाना धीर वीर पनात कायरता छाडि नैरप्रिय छडि समभावतँ परमात्माका ध्यानमें लीन हुआ सहना सो तप है । बहुरि समस्त जीवनिक्क उलझानेवाले रागद्वेषनिक्क जीतना नष्ट करना सो तप है । बहुरि यो यावनारहित भिक्षाके अवसरमें श्रावकका घरमें नवधामक्ति करि इस्तमें धर्या खारा आलूणा फडया खाटा लूरा चीकना रस नीरस तिममें लोलुपता और सक्लेशरहित निर्दोष प्रासुक आहार एक बार भक्षण करना सो तप है । बहुरि जो पचसमितिका पालना अर मन बचनकायक्क चलायमान नहीं करना अपना रागद्वेषरहित आत्मानुभव करनामो तप है । जो स्वपर तत्वकी कथनीका निर्णय करना च्यार अनुयोगका अभ्यासकरि धर्म सहित काल व्यतीत करना सो तप है । बहुरि अभिमान छडि विनयरूप प्रवर्तना कपट छडि सरल परिणाम धारना क्रोध छडि क्षमा ग्रहण करना लोभत्याग निर्वाछक होना सो तप है । जाकरि कर्मका समूहका नाशकरि आत्माका स्वाधोन हो जाय सो तप है । जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना व्याख्यान करना आप निरन्तर अभ्यास करै अन्यक्क अभ्यास करावै सो तप है । तपस्वीनिका देवनिका इन्द्र स्तवन करै भक्तिका प्रकाश करे तपकरि केवलज्ञान उत्पन्न होय है तपका अर्चित्य प्रमान है तपके माहि परिणाम होना अतिदुर्लभ है । नरक

मैं तपकी योग्यता ही दाहीं एक मनुष्यगतिमें होय मनुष्यमें  
 हू उत्तम कुल जाति बल बुद्धि इन्द्रियनिकी पूर्णता जाकै होय  
 तथा रागादिकनिकी मन्दता जाकै हाय तथा विषयनिकी  
 लालमा जाकै नष्ट भई ताके होय है अर तप द्वादशप्रकार है  
 जाकी जैसी शक्ति हाय तिम प्रमाण धारण करी । बालक करो  
 धृष्ट करो धनाढ्य करो निधन करो बलवान करो निर्मल करो  
 सहाय महितहोय सो करो सहायरहित होय सो करो भगवान  
 को प्ररूप्यो तप किसीके हू करनेकू अशक्य नाहीं है । जैसे  
 वायुपित्तकफादिकनिका प्रकाय नाहीं होय रोगकी धृष्टि नाहीं  
 होय जैसे शरीर रत्नत्रयका सहकारी बन्या रहै तैसे अपना  
 सहनन बल बाय दखि तप करो । तथा देशकाल आहारकी  
 योग्यता देखि तप करो । जैसे तपमें उत्माह बघती रहै परि-  
 णामनिमें उज्ज्वलता बघती जाय तैसे तप करो तथा जो इच्छा  
 का निरोध करि विषयनिमें राग घटायना सो तप है । तप ही  
 जीवका कल्याण है तप ही जीवका कल्याण है तपही कामकू  
 निद्राकू प्रमादकू नष्ट करनेवाला है यातै मदछाडि चारहप्रकार  
 तपमें जैसा जैसा करनेकू सामर्थ्य होय तैसा ही तप करी सो  
 चारहप्रकार तपकू आगे न्यारो लिखेंगे । ऐसे तप धर्मकू  
 वणन किया ॥ ७ ॥

अब त्याग धर्मका वर्णन करै हैं । त्याग ऐसे जानना जो  
 धन सपदादि परिग्रहकू कर्मका उदयजनित पराधोन अर अवि-  
 नाशीक अर अभिमानको उपजावनेवाली तृष्णाकू बधावनेवाला

रागद्वेषकी तीव्रता करनेवाला आरम्भकी तीव्रता करनेवाला  
 हिंसादिक पचपापनिका मूल जानि उत्तम पुरुष यक् अंगी-  
 कार ही नाही किया ते धन्य हैं । कोई याक् अङ्गीकार करि  
 याक् हलाहल विष समान जानि जीर्णतृणको ज्यों त्याग  
 किया तिनकी अचिन्त्यमहिमा है । अर कोई जीवनिके तीव्र  
 रागभाव मन्द हुआ नाहीं यातें सकल त्यागनेकू समर्थदानमें  
 लगावै हैं अर जे धर्मके सेवन करनेवाले निर्धनजन हैं तिनके  
 अन्न वस्त्रादिक करि उपकार करनेमें धन लगावै हैं तथा धर्म  
 के आयतन जिनमन्दिरादिकमें जिनसिद्धान्त लिखाय देनेमें  
 तथा उपकरण पूजनादिक प्रभावमें लगावै हैं तथा दुखित दरिद्री  
 रोगिनीके उपकारमें तन मन धन करुणावान होय लगावै है  
 ते धन जीतन्यकू सफल करै हैं । दान है सो धर्मका अङ्ग है  
 यातें अपनी शक्ति प्रमाण भक्ति करि गुणनिके धारक उज्ज्वल  
 पावनिको दान देना है सो परलोककू जीवने महान सुख  
 सामग्रीकू लेजावै है सो निर्विघ्न स्वर्गकू तथा भोगभूमिकू  
 प्राप्त करनेवाला जानो । दानकी महिमा तो अज्ञानी बालगो-  
 पाल हू कहै हैं जो पूर्व दान दिया है सो नाना प्रकार मुख  
 सामग्री पाई है अर देगा सो पावैगा तातें जो सुख सपदाका  
 अर्थी होय सो दानहीमें ॥ अनुराग करो । जे दान करनेमें  
 उद्यमी हैं ते इहा हू तीव्र आर्तपरिणामतें मरि सर्पादिक दुष्ट  
 तिर्यचगति पाय नरक निगोदकू जाय प्राप्त होय हैं । धन  
 कहा साथ जायगा धन पावना तो दानीहीतें सफल है दान-

रहितका धन घोर दुःखिनिकी परिपाटीका कारण है अर इहा हू कृपण घोर निन्दाकू पावै हैं कृपणका नाम भी लोक नाहीं कहै हैं कृपण समका लोक अमंगल मानै हैं जामै औगुण दोष हू होय तो दानीका दोष टकि जाय है । दानीका दोष दूरि भागै है नानकरिही निर्मलकीर्ति जगतमे विख्यात होय है । देनेकरि घैरी हू चरननिम नमै है दान देनेतैं वैरा घैर छाडे है अपना हित करनेवाला मित्र हो जाय हैं जगतमें दान बड़ा है थोडामा दान है सत्यार्थ भक्तिकरि करनेवाला । भोगभूमिका तीनपल्यपर्यंत भोगभोगिदेउलोकमें जायई दानही जगतमें ऊँचाई दान देना विनयसयुक्तस्नेहका वचनकरि सत होय देना अर दानी हैं ते ऐसा अभिमान नाहीं करै हैं जो "म इसका उपकार करै हैं । दानीतो पात्रकू अपना महाउपकार करनेवाला मानै हैं जो लोक रूप अन्धकूपम पढनेका उपकार पात्र बिना कौन करै पात्रबिना लोभीनिका लोभ नाहीं छूटता अर पात्रबिना ससार के उद्धार करनेवाला दान कैस पढता । यातैं धर्मात्मा जननिके तो पात्रके शिलने समान अर दानके देने समान अन्य कोऊ आनन्द नाहीं है बडापना धनाढ्यपना शानीपना पाया है तो दानमें ही उद्यम करो । छद्मकायके जीवनिकू अमयदान देह अमर्यका त्यागकरि ब्रह्मआरम्भके घटारनेकरि देखि सोधिके लना घरना यत्नाचार बिना निर्दयी होय नाहीं प्रवर्तनाकिमी प्राणीमात्रकू मनवचनकायतैं दु खित मतिरुसा/दु खीनिकाकरणा

ही करो यो ही गृहस्थके अमयदान है यातें सुसारमे जन्म मरण रोग शोक दारिद्र्य वियोगादिक सतपका पात्र नहीं, होओगे ।  
 ५०) बहुरि संसारके अधानेवाले हिंसाकू पुष्ट करनेवाले तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करनेवाले तथा शुद्धशास्त्र शृङ्गारशास्त्र मायाचारके शास्त्र वैद्यकशास्त्र रस रमायण मन्त्र जन्त्र मारण वशीकरणादिक शास्त्र महापापके प्ररूपक हैं इनकू अति दूरतें ही त्यागि भगवान् वीतराग सर्वज्ञका कक्षा दया धर्मकू प्ररूपणा करनेवाला स्याद्वादरूप अनेकान्तका प्रकाश करनेवाले नय प्रमाणकरि तत्त्वार्थकी प्ररूपणा करनेवाले शास्त्रनिकू अपने आत्माकू पढ़ने पढ़ावने करि आत्माका उद्धारके अर्थि अपने अर्थि दान करा । अपनी सन्तानकू ज्ञानदान करा तथा अन्य धर्म बुद्धि धर्मके रोचक इच्छक तिनकू शास्त्रदान करा ज्ञानके इच्छक हैं ते ज्ञानके अर्थि पाठशाला स्थापना करें हैं जातें धर्म का स्तम्भ ज्ञान ही है । जहा ज्ञान दान होयगा तहा धर्म रहैगा यातें ज्ञानदानमे प्रयत्न करो । ज्ञानदानके प्रभावतें निर्मल केवलज्ञानकू प्राप्त है । बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रसुक औषधिका दान करो औषधदान बडा उपकारक है अर रोगी कू सीधो तयार औषध मिलै है ताका बडा आनन्द है अर निरधन हाय तथा जाकें टहल करनवाला नाहीं होय ताकू औषध जो करी हुई तयार मिल जाय तो निर्धनिका लाम ममान मानै हैं औषध लेय नीरोग होय है समस्त व्रत तप मयम पालै हैं ज्ञानका अभ्यास करें हैं औषधदान है



ताकै चात्सल्य गुणस्थितिकरणगुण निविचिकित्मा गुणै इत्यादिक अनेक गुण प्रगट होय हैं औषधदानके प्रभावसे रोगरहित देवनिका वैकृतिक देह पावै है । बहुरि आहारदान समस्त दाननिमें प्रधान है प्राणो का जीवन शक्ति बल बुद्धि ये समस्त गुण आहार बिना नष्ट होय जाय हैं आहार दिया सो प्राणीक जीवन बुद्धि शक्ति समस्त दीना । आहारदानसे ही मुनि भ्रातृका सबल धर्म प्रवर्त है आहार बिना मार्ग भ्रष्ट हो जाय आहार है मो समस्त रोग का नाश करनेवाला है जो आहारदान दे है मो मिथ्यादृष्टि ह भोगभूमि कलपवृक्षिका दशाग भागकू अमर्यादकाल भोग अशुधावृषादिककी याधारहित हुआ आरला प्रमाण नीन दीनक आतरै भोजन करै । समस्त दुःखमलश रहिन अमर्याद वण सुखभोगी देवलानिम जाय उपजै है तैसे धनकू पाय च्यार प्रकारके दान ठनम प्रस्तान करा । अर जा निधन है सो हू अपना भोजनमते जेता बने तेता दान करा आपकू आघा भोजन मिलती मैं तै हू ग्राम दोय ग्राम दुःखित व सुखित दोन दरिद्रीनिक अध देवा । बहुरि मिथ्यचन बोलने का बडा दान है आदर सत्कार निय कर्ना स्थान दना कुशल पूछना ये महादान हैं । बहुरि दुष्प्रवृत्तलपनिका त्याग करो पापनिम प्रवृत्तिका त्याग करो चार कथायनिका त्याग करो विरथा करनेका त्याग करो परके दोष सत्य असत्य कदाचित् मति कहा । बहुरि अन्यायका धन ग्रहण करनेका दूरहित त्याग करा भो

ज्ञानीजन हो जो अपना हितके इच्छक हो तो दुःखित जननिकू तो दान करो अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानादि गुणनिके धारक-निका महाविनय मन्मान करो अभस्त जीवनिमें कष्टणा करो मिथ्यादर्शनका त्याग करो रागद्वेष मोहके धारक कुदेव अर आरम्भ परिग्रहके धारक भेषधारी अर हिंसाके पोषक रागद्वेषक पुष्ट करनेवाले मिथ्यादृष्टिनिके शास्त्र इनकू उन्दना स्तवन प्रशमा करनेका त्याग करो क्राध मान माया लोभ इनके निग्रह करनेमें बड़ा उद्यम करो बलेश करनेके कारण अग्रिय उचन गालीके वचन अपमानके उचन मदसहित वचन कदाचित मति कहो इत्यादिक जा परके दुःखके कारण तथा अपना यशकू नष्ट करनेवाला धर्मकू नष्ट करनेवाला मन, उचन कायके प्रवर्तनका त्याग करो ऐसे त्याग धर्मका संक्षेप वर्णन किया ॥ ८ ॥

अब आर्किचन्य धर्मका स्वरूप कहिये है—जो अपना ज्ञानदर्शनमय स्वरूपनिना अन्य किंचित्मात्र हू हमारा नाहीं है मैं किसी अन्य द्रव्यका नाहीं हूँ मेरा कोई अन्य द्रव्य नाहीं है ऐसा अनुभवनिकू आर्किचन्य कहिये है । भो आत्मान् अपना आत्मकू देहर्तें भिन्न अर ज्ञानानन्द मुखकरि पूर्ण परम अतीन्द्रिय भय रहित ऐसा अनुभव करो । भाग्यार्थ—ये देह है सो मैं नाहीं देह तो रम रुधिर हाड मांस चामरमय जड़ अचे-तन है । मैं इस देहर्तें, अत्यन्त भिन्न हूँ ये प्राद्वण क्षत्रियादिक जातिजल है मेरे ये नाहीं है स्त्री पुरुष नपु मक

देहके हैं मेरे नहीं यो गोरापना, मावलापन, राजापना, रकपना,  
 स्वामीपना, सेनकपना, पण्डितपाना, मूर्खपना इत्यादि ममस्त  
 रचना कर्मका उदय जनित देहके हैं मैं तो जागक हूँ ये देहका  
 ममन्धी मेरा स्वरूप नहीं है मेरा स्वरूप अन्य द्रव्यका उप  
 मारहित है तात्ता ठण्डा कठोर लूजा चीरना इलका भारी अष्ट  
 प्रकार स्पर्श है त हमारा रूप नहीं पुद्गलके रूप हैं ये खाटा  
 भीठा रुडया फमायला विरपरा पच प्रकार रस अर सुगन्ध  
 दुर्गन्ध दाय प्रकारका गंध अर काला पीला हरया स्वेत रक्त ये  
 पचवर्ण मेरा स्वरूप नहीं पुद्गलका है मेरा स्वभाव तो सुख  
 करि परिपूर्ण है परन्तु कर्मक आर्धान दुष्टकरि व्याप्त होय रखा  
 हूँ मेरा स्वरूप इन्द्रिय रहित अतान्द्रिय है इन्द्रिया पुद्गलगत  
 कर्म रहित की हुई हैं मैं ममस्त भय रहित अविनाशा अखण्ड  
 आदि अंतरहित शुद्ध ज्ञान स्वभाव हूँ परन्तु अनादिशालतैं जैसे  
 सुपुर्ण अर पापाण मिल रखा है तैसे तथा क्षीरनीर 'ज्यो कर्मनि  
 करि जनाहि कायतैं मित्र गद्या हूँ तिनमहूँ मिथ्यात्तनाम कर्मका  
 उदयकरि अपना स्वरूपका ज्ञानरहित होय दहादिक 'परद्रव्य  
 निकू आपरा स्वरूप जानि अतकाल मैं परिभ्रमण करया अर  
 कारु किंचित जाग्रणादिकके दूर डानेतैं श्रीगुरुनिका उपदश्या  
 परमागमके प्रसादतैं अपना अर परका स्वरूपका ज्ञान भया है  
 जैसे रत्ननिभा ग्यहारी जड़े हुय पचवर्ण रत्नानिके आभरण  
 निर्म गुरुकी कृपातैं अर निरन्तर अभ्यासतैं मिल्या 'हुया' हूँ  
 डरिफा रग अर माणिक्यका रंगू अर तालकू अर मोलक

भिन्न भिन्न जानै है तैसे परमात्मका निरन्तर अभ्यास तै मेरा ज्ञान स्वभावमें मिल्या हुआ राग द्वेष माह कामादिक मेलकू भिन्न जाण्या है अर मेरा ज्ञायक स्वभावकू भिन्न जाण्या है तातैं अर जैसे रागद्वेष मोहादिक भाव कर्मनिमै अर कर्मनिके उदयतैं उपज बिनाशीक शरार परवार धन सम्पदादि परिग्रहमें ममता बुद्धि मेरे जैसे फिर अन्य जन्ममें हू नाहीं उपजे तैसे आकिचन्य भाऊ वा आकिचन्य भावना अनादिकालतैं नाहीं उपजी समस्तपर्यायनिकू अपना रूप मान्या यथा रागद्वेष-मोहक्रोधकामादिकभावों कर्मकृत चिन्तार धे तिनकू आपरूप अनुभवकरि विपरीत भावनिर्ते घोरकर्मबधकू किया अग्र में आकिचन्य भावनामें विघ्नका नाश करनेवाला पच परमगुरुनिका शरणतैं आकिचन्य ही निर्विघ्न चाहू हू और त्रैलोक्यमे कोऊ अन्य वस्तुकू नाहीं चाहू हू । यो आकिचन्यपणा ही ससार समुद्रतैं तारणकू जहाज होहू जो परिग्रहकू महाबध जानि छाडना सो आकिचन्य है आकिचन्यपणा जाके होय है ताके परिग्रहमे बांधा रहै नाहीं है आत्मध्यानमे लीनता होय है देहादिकनिमै धाहमेपमै आपो नाहीं रहे है अर अपना स्वरूप जो रत्नत्रय तामै प्रवृत्ति होय है इन्द्रियनिके रिपयमै दौडता मन रुकि जाय है देहतैं स्नेह छूटि जाय है सभारिकदेवनिका सुख इन्द्र अहमिन्द्र चक्रवर्तीनिका सुख हू दुख दीख है । इनमे ब्रह्मा कैसें करें परिग्रह रत्न सुवर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिनिकू जीर्णतृष्णमें जैसे ममतारहित छांडनेमें विचार नाहीं तैसे परि-

यह लाई है। आर्किचन्य तो परम नीतरागपणा है। जिनके ममारको अन्त आगयो तिनके होय है जाके आर्किचन्यगणा होय ताम परमार्थ जा शुद्धआत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होऊ ही अर पचपरमेष्ठीम भक्ति होय ही अर दुष्टवपिरूपनिका नाश होय ही और इष्ट अनिष्ट मोहनमें रागद्वेष नष्ट हो जाय है केरल उदररूप खाटा भरना अन्य रस नीरम भोजनमें विचार जाता रहे है समस्त धर्मनिमें प्रधान धर्म आर्किचन्य हा मोक्षर निफट समागम करानेवाला है अनादिकालतें जोते सिद्ध भये हैं त आर्किचन्यत ही भये है अर आगे जा जा तीर्थरगदि सिद्ध हायेंगे ते आर्किचन्यपणा हीतें होयेंगे। यद्यपि आर्किचन्यधर्म प्रधानकरि, साधुजननिके ही हाय है तथापि एक दश धर्मर धारक गृहस्थ उस धर्म के ग्रहण करने को इच्छा करे है अर गृहस्चारमें मदगगो होय अतिविरक्त हाय है प्रमाणिरूपरिग्रह धार है आगामी पाछारहित है अन्यायका धन परिग्रह कदाचित् ग्रहण नाहीं करै है अल्पपरिग्रहमें अतिसतापी होय रह है परिग्रहक दुख का देनेवाला और अत्यन्त अस्थिर मान है ताके ही आर्किचन्य भावना होय है। ऐमें आर्किचन्य धर्मका वर्णन किया है ॥६॥

अत्र उत्तमब्रह्मचर्यका स्वरूप कहिये है—समस्त विषयनिमें अनुराग छोड करके ब्रह्म जा शायकस्वभाव - आत्माका ता में जो चया कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है। मोक्षनीजन हो यो ब्रह्मचर्य नाम मत बडो दुर्द्धर है हरेक चापडा विषयनि

केवम हुआ । आत्मज्ञान रहित हैं ते याकू धारक समर्थ ना-  
 ही हैं जे मनुष्यनिमें देवके समान हैं ते धारके समर्थ हैं अन्य  
 रक विषयनिकी लालसाके धारक ब्रह्मचर्य धारनेकू समर्थ  
 नाहीं हैं । यो ब्रह्मचर्यव्रत महादुर्द्धर है जाके ब्रह्मचर्य होम  
 ताके समस्त इन्द्रिय अरु रूपायनिका जीतना सुलभ है ।  
 मो भव्य हो । स्त्रीनिका मुखमें रागी जो मन रूप मदोन्त  
 हस्ती ताकू वैराग्यभावनामें रोक करके अरु विषयाका आशा  
 का अभाव करके दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो । यो काम सो  
 चित्तरूपमूमिमें उपजै है याकी पीडाकरि नाहीं करने योग्य ऐसे  
 पाप करै है यातैं यो काम मनक मथन करै है मनका ज्ञानक  
 नष्ट करै है याहीतैं याकू मनमथ कहिये है ज्ञान नष्ट हो जाय  
 यदि ही स्त्रीनिका महादुर्गंध निन्द्यशरीरकू रागा हुया सेरै है  
 अरु कामकरि अघ हो जाय यदि महाअनीतिकू प्राप्त होय  
 अपनी परकी नारिका निचार ही नाहीं करै हैं । जो इस  
 अन्यायतैंमें इहा ही मास्या जाऊ गा राजाका तीव्रदण्ड होयगा  
 पशु मलीन होयगा धर्म नष्ट हो जाऊ गा सत्यार्थबुद्धि नष्ट  
 हो जायगी । मरणकरि नरकनिके धारदुःख असख्यातकाल  
 पर्यंत भोगी फिर असख्यात तियचनिके दुःखरूप जनेकभव  
 पाय कुमालुपनिमें अथा लूला कूबडा दरिद्रो इन्द्रियनिकल  
 बहरा गू गा चण्डाल भील चमारनिके नीचकुलनिमें उपजी  
 फिर अस्थावरनिमें अनन्तकाल परिभ्रमण करू गा । ऐसा सत्य-  
 विचार कामोके नाहीं उपजै है । इस कामके नाम हो जगतके

जीवनिक प्रगट करे ह । क कहिये खोटा दर्प अपात गर्  
 उपजाये ताने कदर्प कहिये है । अति कामना जो चाँछा उप-  
 जाय दु खित करे तार्त यारू काम कहिये ह । पाकरि अनेक  
 तिर्यचनिके तथा मनुष्यनिके मयनिमें लडिलडि गरिये ताने  
 मार कहिये ह । सयरको नैरी ताते मवरारि कहिये । ब्रह्म जो  
 तपसयम सात गुचित कहिये चलायमान करें सात ब्रह्म  
 कहिये इत्यादिक अनेक दापनिकू नाम ही कहै है या जानि  
 मनपदन कायत अनुरागकरि ब्रह्मचर्य ग्रन्थ पालो । ब्रह्मचर्यकति  
 सहित ही ममारक पार जावेग ब्रह्मचर्यापिना अ । तप 'समस्त  
 असार हें ब्रह्मचर्य पिना मरुल कायाक्लेश निष्फल हें चास  
 जो स्पर्शनइन्द्रियका सुख स बिरक होय अम्पन्तर परमत्मा-  
 स्वरूप आत्मा ताकी उज्जलता दग्ध जैसे अपना आत्मा काम  
 के रागकरि मलीन तादा होय तेमें यत्न करो । ब्रह्मचर्यकरि  
 ही दोउ लाक भूषित होय ह । बहुत जा शीलकी रक्षा चाहो  
 हो अर उज्ज्वल यश चाहो हा अर धर्म चाहो हो अर अपनी  
 प्रतिष्ठा चाहो हो तो चित्तम परमागमको शिखा इस प्रकार  
 धारण करो स्त्रीनिकी कथा मति श्रवण करो मति कहो स्त्री  
 निका रागरक्त बुद्धल चेष्टा मति देखो ये भेला देखना परि  
 णाम बिगाडे है । व्यभिचारी पुरुषनिकी संगतिका करना  
 भांग जरदा मादरुस्तु भक्षण नाहीं करना नाचल तथा पुष्प  
 माला अत्तर फुल्लादिक शील भगके कारण दूरत टालो गीत-  
 नृत्यादि कामोदीपनके कारणनिका परिहार करो । रात्रिमक्षण





भ्राताकू मित्रकू स्वामीकू सेवककू इक, क्षणमात्रमें मारे है ।  
 क्रोधी धीर नरकका पात्र है क्रोधी महाभयकर है समस्त धर्म  
 का नाश करनेवाला है । क्रोधीके सत्यवचन नाहीं होय है  
 अर आपकू अर धर्मकू अर समभावकू दग्ध करनेवाला कुव  
 चनरूप अग्निकू उगलै है क्रोधी होय सो धर्मात्मा सयमी  
 शीलवान मुनि अर श्रावकविकू चोरी अन्याईके, झूठे दोष  
 कलक लगाय दूषित करे है । क्रोधके प्रभावत ज्ञान कुणा  
 होय है आचरण विपरीत हो जाय है श्रद्धान भ्रष्ट हो जाय है  
 अन्यायमें प्रवृत्ति हो जाय है नीतिका नाश होय है अति हठी  
 होय विपरीत मार्गका प्रवर्तक होय है, धर्म अधर्म उपकार  
 उपकारका विचार रहित कृतघ्नी होय है यातैं वीतरागधर्मके अर्थी  
 हो तो क्रोधभासकू कदाचित् प्राप्त भति होहु । बहुरि मार्दव  
 जो कठोरतारहित कोमलपरिणामी जीवमें गुरुनिका बडा  
 अनुराग वर्तै है मार्दवपरिणामीकू साधु मानै है तातैं कठोरता  
 रहित पुरुष ही ज्ञानका पात्र होय है । मानरहित कोमल-  
 परिणामीकू जैसा गुण ग्रहण कराया चाहे तथा जैसी कला  
 मिखाया चाहे तैसी कला गुण प्राप्त हो जाय है समस्त धर्म  
 के मूल समस्त विद्याका मूल विनय है विनयवान समस्तके  
 प्रिय होय है अन्यगुण जामें नाही होय सो पुरुष विनयतैं  
 मान्य होय है विनय परम आभूषण है कोमल परिणामीमें ही  
 दया बसे है मार्दवतैं स्वर्गलोककी अम्युदय सम्पदा निर्वाणकी  
 अग्निनाशिक सम्पदा प्राप्त होय है अर कठोरपरिणामीकू दूर-

हीतें त्याग्या चाहे हैं जैसे पापाणमें जल नाही प्रवेश करे  
 तैसें सद्गुरुनिका उपदेश कठोर पुरुषका हृदयमें प्रवेश नाही  
 कर है जातें जो पापाणकाष्टादिक हू नरमाई लिए होय ताकां  
 जो बालबालमात्र हू जहा घड्या चाहे लीन्या चाहे तहा,  
 बालमात्र ही उत्तरि आवे तदि जैसी सरत भूरेत बनाया चाई  
 तैसें ही घनै है अर कोमलरहित मै जहा टाची लगाई नैहा  
 चिडक उत्तरि दूरि पडे शिल्पीका अभिप्रायमाफिक दृष्टिमें  
 नाही आवें तैसें कठोरपरिणामीक यथान्त शिक्षा काठोरी  
 अभिमानी कोऊक प्रिय नाही लागे अभिमानीका मन्त्रोक्त  
 पिना किया बीरी होय है अर परलोकमें अतिनीच स्थितिमें  
 प्यनिमे असख्यातकाल नाना तिरस्कारका पाइ होय है चात  
 कठोरता त्यागि मार्दवभावना ही निरन्तर धन्य करे ।

बहुरि कपट समस्त अनर्थनिका मृदु है श्रुति अर  
 प्रीतीका नाश करनेवाला है कपटीमें अल्प छु निर्दयता  
 विश्वामघातादि समस्त दोष यैसें है इन्हीं गुण नाही  
 समस्त दोष ही दोष नाश करे है यत्कर्त्ता यहा अप-  
 यशक पाप तिर्यच नरकादिक गतिनिर्णयकाल अल्प  
 करे है मायाचार रहित आज विधमेका धन्य है समस्त गुण  
 है समस्त लोकनिक प्रीतका प्रीतीतिहा कारण है परन्तु  
 देवनिकरि पूज्य इन्द्र प्रतीन्द्रादिक इत है गति सरल  
 ही आत्माका हित है । बहुरि सत्कर्त्ता समस्तगुण  
 सदाकाल कपटादि दोषरहित जगत्तें गन्तव्यता है ।

है अर परलोकमें, अनेक देव मनुष्यादिक जाकी आज्ञा । समस्त ऊपरि धार है अर मत्परादी इहा ही अग्राद निन्दा करने योग्यहाय है । समस्तके अप्रतीतिका कारण है बांधव मित्रादिक ह अवना करि छाडै हैं गनानिकरि जिन्हाछेद, सर्वस्वहरणादिक दण्ड पार है अर परलोकमें तिर्यचगति है - वचन रहित एकेन्द्रिय विरुलप्रयादि अमरुयात पर्याय धार है यार्त सत्य धर्मका धारणा ही श्रेष्ठ है । बहुरि जाका शुचि आचरण होय सो ही जगतमें पूज्य है शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है । जाका, आहार निहारादिक ममस्त प्रवृत्ति हिमारहित, हिसाका ममतें यत्नाचार सहित होय अर अन्यके धनमें, अन्यकी स्त्रीमें कदाचित् स्वप्नम बाछा नाहीं होय सो ही, उज्ज्वल आचरण का धारक है तिमक ही जगत पूज्य मानै है, निर्लोभी का समस्त लोक निश्वास करै है सो ही लोकमें उच्चम है ऊर्ध्वलोकका पात्र है लोभ रहितका बडा उज्ज्वल यश प्रगटै है लोभी महामलीन ममस्त दोषनिका पात्र है निच्य कर्ममें, लोभीका प्रीति हाथ है लोभीक ग्राह्य अग्राह्य स्वाद्य-अस्वाद्य कृत्य अकृत्य का विचार, ही नाहीं होय है इहा हू लोकमें, निन्दा धर्ममें परांगुलता, निर्दयता प्रगट दखिय है लोभी धर्म, अथे कामक नष्टकरि कुमरणकरि दुर्गति जाय है लोभीका हृदयमें गुण अवकाश नाहीं, पावै है हमलोक परलोकमें लोभीक अचिन्त्य क्लेश दुख प्राप्त हाय है यार्त शौच धर्मका धारण ही श्रेष्ठ है बहुरि समय हां आत्माका हित है इस लोकमें समयका धारक

ममस्त लोकनिके बढने योग्य होय है समस्त पापनिकरि  
 नाहीं लिपै है याकी इम लोकमें परलोकर्म अचिन्त्य महिमा है  
 अर थमयमी है सो प्राणनिका घात अर विषयनिमें अनुराग  
 करि जशुम कर्मका बन्ध करै है यातैं सयम धर्म ही जीवका  
 दित है । गहुरि तप है सो कर्मका सजर निर्जरा करनेका प्रधान  
 कारण है तप ही आत्माकू कर्ममल रहित करै तपका प्रभापतैं  
 यदा ही अनेक ऋद्धि प्रगट होय है तपका अचिन्त्य प्रभापक  
 तपविना कामकू निद्राकू कौन मारै तपविना बाछाकू कौन  
 मारै इ द्वियनिके विषयनिको मार्गनेम तप ही समर्थ है आशा-  
 रूप पिशाचणी तपहीतैं मारो जाय है कामका विजय तपहीतैं  
 होय है तपका साधन करनेवाला परीषह उपमर्ग आपते हू रत्न-  
 थय धर्मतैं नाहीं छूटै यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है  
 तपविना ससारतैं छूटना नाही है जात चक्रीपनाका हू राज्य  
 छाडि तप धारै सो त्रैलोक्यमें बढने योग्य पूज्य होय है अर  
 तपकू छाडि राज्य ग्रहण करै सो अतिनिन्द्य धुधुकार करने  
 योग्यहोय तृणतैं हू लघु होय यातैं त्रैलोक्यमे तप समान महान्  
 अन्य नाहीं ।

बहुरि परिग्रह समान भार नाही जेते दुःख दुर्घ्यान क्लेश  
 बरि प्रियोग शोक भय अपमान हैं ते समस्त परिग्रहके इच्छक  
 हैं जैसैं परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैसैं तैमें खेद रहि  
 होय है जैसैं बटा भार करि दुःखित पुरुष भार रहित होय  
 तदि सुखित होय तैमें परिग्रहकी वासना मिटे सुखित होय है

ममस्त दुःख अर समस्त पापनिका उपजावनेका स्थान ये परिग्रह हैं जैमें नदीनिकरि समुद्र तृप्त नाहीं होय अर ई धन करि अग्नि तृप्त नाहीं हाय है आशारूप खाड़ा बड़ा आगाध है नाका नलस्पश नाहीं दिन दिन यामै भरो त्यों त्यों खाड़ा बधना जाय जो आशारूप खाड़ा निधिनिर्त नाहीं भरै सो अन्य सपदात कैमै भरै अर ज्यां ज्यां परिग्रहकी आशाका त्याग करो त्यों २ भरतो चल्या जाय जातें ममस्त दुःख दूरि करने कू त्याग ही समर्थ है त्यागहात अन्तरङ्ग बन्धन रहित होय अनन्त सुखरु धारक होहुंगे परिग्रहके बधनमें बन्धे जीव परिग्रह त्यागते ही छुटि मुक्त हाय तातें त्याग धर्म धारण ही श्रेष्ठ है बहुरि ह आत्मन् । यो दह अर स्रो पुत्र, धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकनिमे एक परमाणुमात्र हू तुम्हारा नाहीं है पुद्गल द्रव्य है जड़ है विनाशीक हैं अचेतन हैं इन परद्रव्यनिर्मै 'अह' ऐसा सकल्प तीव्र दर्शन मोह कर्मका उदवजिना कौन करायै इम परद्रव्यमें आत्म मरूप मेरे रुदाचित् मति होइ मैं अकिंचनहू । या आकिंचयमानाक प्रभारत कर्मका लेपरहित पहा ही समस्त बन्ध रहित हुआ तिष्ठे है साक्षात् निर्माणका कारण आकिंचन्य धर्म ही धारण करो बहुरि कुशोल महापाप है ससार परिभ्रमणका बीज है ब्रह्मचर्यक पालनेमालेतें हिंसादिक पाप निका प्रचार दूर भागै है । ममस्त गुणनिकी सपदा यामैं बसै है जितन्द्रियता प्रगट हाय है ब्रह्मचर्यतें कुलनात्यादि भूषित होय हैं परलोकमें अनेक श्रेष्ठिका धारक महर्द्विक देव होय

दुर्लभ है नाहीं बोल उठावना नाहीं दूरदेश जावना नाहीं क्षुधा  
 तृषा शोथ उष्णताकी वेदनाका आवना नाहीं किसीका विस-  
 वाद झगडा है नाहीं अत्यन्त सुगम समस्त क्लेश दुःख रहित  
 स्वाधीन आत्माका ही सत्य परिणमन है । यातैं समस्त ससार  
 परिभ्रमणतैं छूटि अनन्तज्ञान दर्शन मुख वीर्यका धारक सिद्ध  
 अवस्था याका फल है । ऐसे दशलक्षण धर्मका संक्षेप करि  
 वर्णन कियो ।

# समाप्त #

---

